0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: M

नं. १४८

# रसज्ञ रञ्जन

हि.२८८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

n Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

pal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

# रसज्ञ रञ्जन

१९४८

सर्वसुलभ

हि.२००

लेखक—
आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

बनारस

प्रकाशक—
शिक्षा सदन
४/१३३ गोवर्धन सराय
बनारस।

सन् १९४९ ] [ मूल्य १।)

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

n Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

# विषय-सूची


| | | |
|---|---|---|
| | जीवन-परीचय | १ |
| १ | कवि-कर्त्तव्य | ६ |
| २ | कवि बनने के लिये सापेक्ष साधन | २६ |
| ३ | कवि और अविता | ३३ |
| ४ | कविता | ५२ |
| ५ | नायिका-भेद | ५६ |
| ६ | हंस-सन्देश | ६५ |
| ७ | हंस का नीर-क्षीर विवेक | ७५ |
| ८ | कवियों की उर्मिला-विषयक उदासीनता | ८१ |
| ९ | नल का दुस्तर दूत कार्य | ८५ |



मुद्रक—
**परेशनाथ घोष,**
सरला प्रेस, बानरस।


al Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:
हि. २८६

# पंडित महावीरप्रसाद जी द्विवेदी

## जीवन-परिचय

जीवनी—पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी का जन्म रायबरेली के अन्तर्गत दौलतपुर नाम ग्राम में सं० १९२१ वैशाख शुक्ल ४ को हुआ था। निर्धनता एवं ग्राम जीवन के जिस वातावरण में आपकी प्रारंभिक शिक्षा आरम्भ हुई, वह सर्वथा निराशा-जनक थी। गाँव के मदरसे में उर्दू-हिन्दी पढ़ते समय ही घर पर अपने पितृव्य पण्डित दुर्गाप्रसादजी के प्रबन्ध से इन्होंने थोड़ा-सा संस्कृत-व्याकरण पढ़ा एवं शीघ्रबोध तथा मुहूर्त-चिन्तामणि आदि पुस्तकें भी कण्ठ कीं। ग्राम्य-पाठशाला की पढ़ाई समाप्त करने के बाद इन्होंने नित्य प्रति १५ कोस रायबरेली जाकर, फीस, आदि की कठिनाइयों के बीच अंगरेजी शिक्षा प्राप्त की, उसे पढ़ कर हठात् नेत्रों के समक्ष स्वनामधन्य पं० ईश्वरचन्द विद्यासागर का विद्यार्थी जीवन याद आ जाता है। अस्तु, कठिनाइयों की अधिकता के कारण वह स्कूल छोड़ कर आपको उन्नाव के पुरवा के कस्बे के एँग्लोवर्नाक्यूलर स्कूल में आना पड़ा। दुर्भाग्यवश वह स्कूल कुछ ही समय में टूट गया और द्विवेदी-जी को वहां से जाना पड़ा।

क्रमशः फतेहपुर और उन्नाव में शिक्षा प्राप्त करके ये अपने पिता पं० रामसहायजी के पास बम्बई चले गये। यहाँ आपने मराठी, गुजराती, संस्कृत एवं अंग्रेजी का अच्छा अध्ययन किया। विद्याध्ययन के साथ ही साथ आप तार का काम भी सीखते थे। कुछ ही समय में इन्हें जी० आई० पी० रेलवे में सिगनेलर की जगह मिल गयी और क्रम-क्रम से उन्नति करते-करते आप झाँसी में डिस्ट्रिक्ट ट्रैफिक सुपरिन्टेण्डेण्ट के हेड क्लर्क हो गये। यहाँ बंगालियों के सहवास ने इन्हें बंगला भाषा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



के अभ्यास में सहायता पहुँचायी। इसी समय आपने संस्कृत के काव्य-ग्रन्थों तथा अलङ्कार ग्रन्थों का विशेष रूप से मनन किया। धीरे-धीरे आप का विचार साहित्य-सेवा की ओर आकृष्ट हुआ। इसी समय एक घटना ऐसी हो गयी, जिससे यह विचार कार्य-रूप में परिणत हो गया। पुराना डी० टी० एस० के स्थान पर जो साहब आये थे उनसे इनकी कुछ कहा सुनी हो गयी जिसके परिणाम-स्वरूप इन्होंने नौकरी से इस्तीफा दे दिया और स्वतन्त्र होकर हिन्दी की सेवा में जुट गये। तब से बराबर द्विवेदीजी मातृ भाषा का उपकार ही करते रहे।

परिस्थितियाँ—द्विवेदीजी के साहित्य-क्षेत्र में आने के समय हिन्दी की दशा बहुत ही अस्थिर थी। कविता के क्षेत्र में जो नयी जान भारतेन्दुजी ने डाली थी उससे यद्यपि बहुत उपकार हुआ था और कविता धीरे-धीरे जीवन के समीप आती जाती थी, किन्तु उसकी भाषा ब्रजभाषा ही थी जिससे आगे चलकर बड़ी विषम स्थिति उत्पन्न हो गयी। गद्य की भाषा खड़ी और कविता की भाषा ब्रजभाषा होने से खड़ी बोली बनाम ब्रजभाषा का द्वन्द्व सामने आया और हिन्दी के कवि दो समाजों में बँट गये, जो एक दूसरे का प्रबल विरोध करते थे। द्विवेदीजी के समय में यही द्वन्द्व प्रबल रूप धारण किये हुए था। गद्य की दशा और भी बुरी थी। भारतेन्दु के समय से गद्य की प्रणाली निश्चित रूप से विकसित होने लगी थी। गद्य के प्रत्येक क्षेत्र निबन्ध, उपन्यास, नाटक आदि की ओर ध्यान दिया जा रहा था; बंगला तथा अंग्रेजी आदि के ग्रन्थों के अनुवाद से भाषा का भंडार भरा जा रहा था, पर अनुवादकर्ता तथा भारतेन्दु के अनन्तर आने वाले अधिकांश साहित्य-सेवियों का हिन्दी से अधिक परिचय न होने से, भाषा में शिथिलता, व्याकरण दोष तथा अंग्रेजी और बंगलापन की बू आने लगी। परिणामस्वरूप हिन्दी का रूप ही बिगड़ जाने की

pal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



आशंका होने लगी। प्रवाह की तीव्रता के कारण सारे बन्धन टूट गये। ऐसी स्थिति में द्विवेदीजी हिंदी क्षेत्र में आये। अपनी प्रतिभा के बल से उन्होंने पद्य तथा गद्य दोनोंपर अपना शुभ प्रभाव डाला।

कविता—जैसा पहले कहा गया है, द्विवेदीजी के समय में ब्रज और खड़ी बोली का प्रश्न तीव्र में था। यद्यपि पं० श्रीधर पाठक और पं० नाथूरामजी शर्मा 'शङ्कर' ने खड़ी बोली को अपनाकर उसे माँजने का प्रयत्न किया, पर इस ओर सबसे अधिक प्रभाव द्विवेदीजी ही का पड़ा। "सरस्वती" में तो अपनी कविताएँ आप छापते ही थे पर साथ ही 'कविता-कलाप' 'काव्य-मंजूषा' तथा 'सुमन' आदि कविता संग्रह एवं 'कुमारसम्भवसार' आदि अन्य ग्रंथ भी आपने प्रकाशित कराये। यद्यपि जैसा द्विवेदीजी ने 'रसज्ञ-रंजन' में कहा है, वे अपने को कवि नहीं मानते थे, पर इसमें संदेह नहीं कि खड़ी बोली का रंग गाढ़ा करके तथा कविता में सामयिकता तथा उपयोगिता का समावेश करके आपने कविता को एक नए और निश्चित मार्ग पर डाला, जिससे प्रभावित होकर खड़ी बोली के अनेकानेक कविवर मैदान में आये। बाबू मैथिली शरण गुप्त, पं० रामचरित उपाध्याय, पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय तो इनके उत्साहित शिष्यों में हैं ही, पर साथ ही 'सनेही', ठाकुर गोपालसिंह, बाबू सियारामशरण गुप्त, पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी आदि पर भी द्विवेदीजी का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव विद्यमान है। स्वयं एक बड़े कवि न होते हुए भी आप एक बहुत बड़े कवि-निर्माता अवश्य थे।

गद्य—कविता से भी अधिक द्विवेदीजी का प्रभाव हिन्दी गद्य के ऊपर पड़ा है। इस क्षेत्र में सब से बड़ा काम गद्य के स्वरूप की रक्षा करना था। जो व्याकरण दोष, लचरपन तथा विदेशी वाक्य-विन्यास की बू गद्य में स्थान पा रही थी उसका नियंत्रण करना आपका प्रथम कार्य था। "इच्छा किया" आदि प्रयोगों

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



को लेकर आपने 'सरस्वती' में जो तीव्र आलोचना की उससे लेखकों के होश ठिकाने आने लगे, इस तीव्र कषाघात से लोगों की आँखें खुलीं और उन्हें ज्ञात हुआ कि हिन्दी भी एक ऐसी भाषा है, जिसमें व्याकरण के नियम हैं, वाक्य-विन्यास की शैली है और शब्दों का साधु प्रयोग। क्रमशः हिंदी-गद्य एक निश्चित शुद्ध शैली पर आ गया। पं० रामचन्द्रजी शुक्ल का मत था कि द्विवेदीजी का यह कार्य, जब तक भाषा के लिये व्याकरण विशुद्धता आवश्यक समझी जाती है, सदा साहित्य के इतिहास में स्वर्णक्षरों में अङ्कित रहेगा।

गद्य के स्वरूप-निर्धारण के अतिरिक्त द्विवेदीजी ने उसके विविध अङ्गों की पूर्ति का भी उद्योग किया। सामयिक विषयों पर लिखे हुए निबन्धों के अतिरिक्त आपने "बेकन-विचार-रत्नावली" नामक निबंधों का संग्रह तथा 'स्वाधीनता', 'शिक्षा, 'सम्पत्ति-शास्त्र आदि कई अन्य ग्रंथ बेकन, मिल, स्पेंसर आदि विद्वानों के ग्रंथों के अनुवाद-स्वरूप प्रस्तुत किये। समालोचना के क्षेत्र में भी आपने कई पुस्तक तथा लेख प्रकाशित किये। उनके कविता-सम्बन्धी कई निबंध "रसज्ञ-रञ्जन" में विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त 'हिन्दी कालीदास की समालोचना', 'कालिदास की निरंकुशता', 'नैषधचरित चर्चा' आदि कई अन्य ग्रंथ इसी विषय पर और हैं।

इस प्रकार हिन्दी पर द्विवेदी जी का प्रभाव सर्वतोमुखी तथा चिरकाल तक रहने वाला है।

द्विवेदीजी की शैली—लेखक को कैसी भाषा प्रयुक्त करनी चाहिए, इसके ऊपर द्विवेदीजी ने 'हिन्दी कालिदास की आलोचना तथा 'रसज्ञ-रञ्जन' में अपने विचार प्रकट किये हैं। 'रसज्ञ-रञ्जन' में उन्होंने कहा है कि "ऐसी भाषा लिखनी चाहिए, जिसे सब सहज में समझ लें.........यदि इसी उद्देश्य

pal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



की सफलता न हुई तो लिखना ही व्यर्थ हुआ।" एक अन्य स्थल पर कहा है कि "बेमुहाविरा भाषा अच्छी नहीं लगती 'क्रोध क्षमा कीजिये' इत्यादि वाक्य कान को अतिशय पीड़ा पहुँचाते हैं।" इन बातों से द्विवेदीजी की भाषा तथा शैली का अनुमान किया जा सकता है। उन्होंने घोर तत्समता का प्रयोग नहीं किया। 'शुद्धतर' और 'शुद्धतम' की अपेक्षा वे अधिक का प्रयोग अच्छा समझते हैं। उर्दू तथा फ़ारसी के प्रचलित शब्द द्विवेदीजी द्वारा बराबर प्रयुक्त हुए हैं। सब कुछ होते हुए भी यह ध्यान रखना चाहिये कि अपने ही सिद्धान्तों का अक्षरशः पालन करना कठिन हो जाता है और द्विवेदीजी भी इस नियम के अपवाद नहीं हैं। यही कारण है कि बीच-बीच में आपका संस्कृत का पाण्डित्य अपना चमत्कार दिखा ही जाता है और 'सौरस्य', 'कौटिल्य पुरुषायित सम्बन्ध आदि शब्द स्थान-स्थान पर आते हैं। उग्र समालोचक के नाते समझिये अथवा और किसी भी कारण से हो——द्विवेदीजी की शैली में प्रवाह की कमी है। एक ही भाव को बार-बार दुहराने की प्रवत्ति भी आपकी शैली की विशेषता है, 'रसज्ञ-रञ्जन' में भी इन प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है।

'रसज्ञ-रञ्जन' आपके साहित्यिक निबन्धों का सर्वोत्तम संग्रह है। इसमें वर्णित 'ऊर्मिला-विषयक कवियों की उदासीनता' पढ़ कर ही शायद कविवर मैथलीशरणजी को 'साकेत' की सृष्टि करनी पड़ी थी। 'हंस का नीर-क्षीर-विवेक' शीर्षक लेख भी अपने ढंग का एक ही है। 'नल का दुस्तर दूत कार्य' और 'हंस-सन्देश' में एक ओर जहाँ आलङ्कारिक वर्णन की विशेषता है, वहाँ दूसरी ओर भावों की ऊहापोह और उच्चकोटि के शृङ्गार-रस का समुचित स्वाद मिलता है। कवि और कविता के विषय में आपने जो कुछ लिखा है वह यद्यपि बीस वर्ष पुराना लिखा हुआ है; परन्तु आज भी उसकी अधिकांश बातें सत्य और नये कवियों के लिए माननीय हैं।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

# रसज्ञ-रञ्जन

## १—कवि-कर्त्तव्य

[ १ ]

कवि-कर्त्तव्य से हमारा अभिप्राय हिन्दी के कवियों के कर्त्तव्य से है। समय और समाज की रुचि के अनुसार सब बातों का विचार करके हम यह लिखना चाहते हैं कि कवि का कर्त्तव्य क्या है। अपने मनोगत विचारों को हमें थोड़े ही में लिखना है, अतः इस लेख को हम चार ही भागों में विभक्त करेंगे; अर्थात्——छन्द, भाषा, अर्थ और विषय। इन्हीं की यथाक्रम हम समीक्षा आरम्भ करते हैं।

### छन्द

गद्य और पद्य दोनों ही में कविता हो सकती है। यह समझना अज्ञानता की पराकाष्ठा है कि जो कुछ छन्दोबद्ध है सभी काव्य है। कविता का लक्षण जहाँ कहीं पाया जाय, चाहे वह गद्य में हो चाहे पद्य में, वही काव्य है। लक्षण-हीन होने से कोई भी छन्दोबद्ध लेख काव्य नहीं कहलाये जा सकते और लक्षण-युक्त होने से सभी गद्य-बन्ध काव्य-कक्षा में सन्निविष्ट किये जा सकते हैं; गद्य के विषय में कोई विशेष नियम निर्दिष्ट करने की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी पद्य के विषय में है। इसलिये हम, यहाँ पर, पद्य ही का विचार करेंगे। भाषा, अर्थ और विषय के सम्बन्ध में जो कुछ हम कहेंगे वह गद्य के सम्बन्ध में भी, प्रायः समान भाव से प्रयुक्त हो सकेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जिन पंक्तियों में वर्णों या मात्राओं की संख्या नियमित होती हैं, वे छन्द कहाती हैं; और छन्द में जो कुछ कहा जाता है वह पद्य कहलाता है। कोई-कोई छन्द और पद्य दोनों को एक ही अर्थ का वाचक मानते हैं।

जो सिद्ध कवि हैं वे चाहे जिस छन्द का प्रयोग करें उनका पद्य अच्छा ही होता है, परन्तु सामान्य कवियों को विषय के अनुकूल-छन्द योजना करनी चाहिए। जैसे समय-विशेष में राग विशेष के गाये जाने से चित्त अधिक चमत्कृत होता है वैसे ही वर्णन के अनुकूल वृत्त-प्रयोग करने से कविता का आस्वादन करने वालों को अधिक आनन्द मिलता है। गले में डाली हुई मेखला के समान वृत्ति-रूपिणी हार लता को अनुचित स्थान में विनिवेशित करने से कवि की अज्ञानता दर्शित होती है। इस लेख में हम इस बात का विवेचन नहीं करना चाहते कि किस विषय के लिए कौन सा छन्द प्रयोग में लाना चाहिए। काव्य के मर्मज्ञ निपुण कवि स्वयमेव जान सकते हैं कि कौन छन्द कहाँ विशेष शोभा-वर्धक होगा। प्राचीन संस्कृत कवि इसका पूरा-पूरा विचार रखते थे। उन्होंने ऋतुओं का वर्णन प्रायः उपजातिछन्द में किया है, नीति का वंशस्थ में किया है, चन्द्रोदयादि का रथोद्धता में किया है, वर्षा और प्रवास का मन्दाक्रान्ता में किया है और स्तुति, यश, शौर्य आदि का शार्दूलविक्रीड़ित और शिखरिणी में किया है। यही नहीं; किन्तु वृत्त-रचना में छन्द-शास्त्र के नियमों के अतिरिक्त वे लोग और-और विषयों का भी ध्यान रखते थे। दोधक-वृत्त का लक्षण तीन भगण और दो गुरु है। इस नियम का प्रतिपालन करते हुए वे तीन ही तीन अक्षर वाले शब्द प्रयोग करते थे, जिससे छन्द की शोभा विशेष बढ़ जाती थी। तोटक में वे रूखे अक्षरवाले ही शब्द रखते थे; क्योंकि ऐसे अक्षर वाले शब्दों से संगठित हुआ तोटक, ताल की द्रुतगति के समान,

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



मन को सविशेष आनन्दित करता है। हिन्दी के कवियों को भी इन बातों का विचार जरूर करना चाहिये।

दोहा, चौपाई, सोरठा, घनाक्षरी, छप्पय और सवैया आदि का प्रयोग हिन्दी में बहुत हो चुका। कवियों को चाहिये कि यदि वे लिख सकते हैं, तो इनके अतिरिक्त और-और छन्द भी लिखा करें। हम यह नहीं कहते कि ये छन्द नितान्त परित्यक्त ही कर दिये जायँ। हमारा अभिप्राय यह है कि इनके साथ-साथ संस्कृत काव्यों में प्रयोग किये गये वृत्तों में से दो चार उत्तमोत्तम वृत्तों का भी प्रचार हिन्दी में किया जाय। इन वृत्तों में से द्रुतविलम्बित वंशस्थ और बसन्ततिलका आदि वृत्त ऐसे हैं जिनका प्रचार हिन्दी में होने से हिन्दी काव्य की विशेष शोभा बढ़ेगी। किसी-किसी ने इन वृत्तों का प्रयोग आरम्भ भी कर दिया है। यह सूचना उन्हीं लोगों के लिए है जो सब प्रकार के छन्द लिखने में समर्थ हैं, जो घनाक्षरी और दोहे अथवा चौपाई की सीमा उल्लंघन करने में असमर्थ हैं, उनके लिए नहीं।

आजकल के बोलचाल की हिंदी कविता उर्दू के विशेष प्रकार के छन्दों में अधिक खुलती है, अतः ऐसी कविता लिखने में तदनुकूल छन्द प्रयुक्त होने चाहिए।

कुछ-कुछ कवियों को एक ही प्रकार का छन्द सध जाता है; उसे ही वे अच्छा लिख सकते हैं। उनको दूसरे प्रकार के छन्द लिखने का प्रयत्न भी न करना चाहिए। यदि कविता सरस और मनोहारिणी है, तो चाहे वह एक ही अथवा बुरे से बुरे छन्द में क्यों न हो, उससे आनन्द अवश्य ही मिलता है। तुलसीदास ने चौपाई और बिहारीलाल ने दोहा लिख कर ही इतनी कीर्ति सम्पादन की है। प्राचीन कवियों को भी किसी-किसी वृत से समधिक स्नेह था; वे अपने आदृत वृत्त ही को अधिक काम में लाते थे और उसमें उनकी कविता खुलती भी अधिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



थी। भारवि का वंशस्थ, रत्नाकर की वसन्ततिलका, भवभूति और जगन्नाथ की शिखरिणी, कालिदास की मंदाक्रान्ता और राजशेखर का शार्दूल-विक्रीड़ित इस विषय में प्रमाण है।

पादान्त में अनुप्रास-हीन छंद भी हिन्दी में लिखे जाने चाहिये। इस प्रकार छंद जब संस्कृत, अंग्रेजी और बङ्गला में विद्यमान है तब, कोई कारण नहीं, कि हमारी भाषा में वे न लिखे जायँ। संस्कृत ही हिंदी की माता है। संस्कृत का सारा कविता-साहित्य इस तुकबंदी के बखेड़े से वहिर्गत-सा है। अतएव इस विषय में यदि हम संस्कृत का अनुकरण करें, तो सफलता की पूरी-पूरी आशा है। अनुप्रास-युक्त पादान्त सुनते-सुनते हमारे कान उस प्रकार की पंक्तियों के पक्षपाती हो गये हैं। इसलिए अनुप्रास-हीन रचना अच्छी नहीं लगती। बिना तुक वाली कविता के लिखने अथवा सुनने का अभ्यास होते ही वह भी अच्छी लगने लगेंगी, इससे कोई संदेह नहीं। अनुप्रास और यमक आदि शब्दा-डम्बर कविता के आधार नहीं, जो उनके न होने से कविता निर्जीव हो जाय; या उससे कोई अपरिमेय हानि पहुँचे। कविता का अच्छा और बुरा होना विशेषतः अच्छे अर्थ और रस-बाहुल्य पर अवलम्बित है। परन्तु अनुप्रासों के ढूँढ़ने का प्रयास उठाने में समुचित शब्द न मिलेने से अर्थांश की हानि हो जाया करती है, इससे कविता की चारुता नष्ट हो जाती है। अनुप्रासों का विचार न करने से कविता लिखने में सुगमता भी होती है और मनो-ऽभिलषित अर्थ व्यक्त करने में विशेष कठिनाई भी नहीं पड़ती। अतएव पदान्त में अनुप्रास-हीन छंद हिन्दी में लिखे जाने की बड़ी आवश्यकता है। संस्कृत में प्रयोग किये गये शिखरिणी, वंशस्थ और वसन्ततिलका आदि वृत्त ऐसे हैं जिनमें अनुप्रास का न होना काव्य-रसिकों को बहुत ही कम खटकेगा। पहले-पहल इन्हीं वृत्तों का प्रयोग होना चाहिए।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



किसी भी प्रचलित परिपाटी का क्रम-भङ्ग होता देख प्राचीनता के पक्षपाती बिगड़ खड़े होते हैं और नई चाल के विषय में नाना प्रकार की कुचेष्टाएँ और दोषोद्भावनाएँ करने लगते हैं, यह स्वाभाविक बात है। परन्तु यदि इस प्रकार की टीकाओं से लोग डरते, तो संसार से नवीनता का लोप ही हो जाता। हमारा यह मतलब नहीं कि पदांत में अनुप्रासवाले छंद लिखे ही न जाया करें। हमारा कथन इतना ही है कि इस प्रकार छंदों के साथ अनुप्रास-हीन छंद भी लिखे जायँ, बस !

## भाषा

कवि को ऐसी भाषा लिखनी चाहिए जिसे सब कोई सहज में समझ ले और अर्थ को हृदयङ्गम कर सके। पद्य पढ़ते ही उसका अर्थ बुद्धिस्थ हो जाने से विशेष आनन्द प्राप्त होता है और पढ़ने में जी लगता है। परन्तु जिस काव्य का भावार्थ कठिनता से समझ में आता है, उसके आकलन में जी नहीं लगता और बराबर अर्थ का विचार करते-करते उससे विरक्ति हो जाती है। जो कुछ लिखा जाता है, वह इसी अभिप्राय से लिखा जाता है कि लेखक का हृद्गत भाव दूसरे समझ जायँ। यदि इस उद्देश्य ही की सफलता न हुई, तो लिखना ही व्यर्थ हुआ। अतएव क्लिष्ट की अपेक्षा सरल लिखना ही सब प्रकार वांछनीय है। कालिदास, भवभूति और तुलसीदास के काव्य सरलता के आकार हैं; परम विद्वान् होकर भी उन्होंने सरलता ही को विशेष मान दिया। इसीलिये उनके काव्यों का आदर है। जो काव्य सर्वसाधारण की समझ के बाहर होता है, वह बहुत कम लोकमान्य होता है। कवियों को इसका सदैव ध्यान रखना चाहिए।

कविता लिखने में व्याकरण के नियमों की अवहेलना न करनी चाहिए। शुद्ध भाषा का जितना मान होता है अशुद्ध का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



उतना नहीं होता। व्याकरण का विचार न करना कवि की तद्विषयक अज्ञानता का सूचक है। कोई-कोई कवि व्याकरण के नियमों की ओर दृक्पात तक नहीं करते। यह बड़े खेद और लज्जा की बात है। ब्रजभाषा की कविता में कविजन मनमानी निरंकुशता दिखलाते हैं। यह उचित नहीं। जहाँ तक सम्भव हो शब्दों के मूल-रूप न बिगाड़ना चाहिए।

मुहाविरे का भी विचार रखना चाहिए। बे-मुहाविरा-भाषा अच्छी नहीं लगती। "क्रोध क्षमा कीजिए" इत्यादि वाक्य कान को अतिशय पीड़ा पहुँचाते हैं। मुहाविरा ही भाषा का प्राण है; उसे जिसने नहीं जाना, उसने कुछ नहीं जाना। उसकी भाषा कदापि आदरणीय नहीं हो सकती।

विषय के अनुकूल शब्द-स्थापना करनी चाहिए। कविता एक अपूर्व रसायन है। उसके रस की सिद्धि के लिए बड़ी सावधानी, बड़ी मनोयोगिता और बड़ी चतुराई आवश्यक होती है। रसायन सिद्ध करने में आँच के न्यूनाधिक होने से जैसे रस बिगड़ जाता है, वैसे ही यथोचित शब्दों का उपयोग न करने से काव्यरूपी रस भी बिगड़ जाता है। किसी-किसी स्थल-विशेष पर रूक्षाक्षर वाले शब्द अच्छे लगते हैं, परन्तु और सर्वत्र ललित और मधुर शब्दों ही का प्रयोग करना उचित है। शब्द चुनने में अक्षर मैत्री का विशेष विचार रखना चाहिए। अच्छे अर्थ का द्योतक न होकर भी कोई-कोई पद्य केवल अपनी मधुरता ही से पढ़ने वालों के अन्तःकरण को द्रवीभूत कर देता है। "टुटत अङ्ग बैठे तरु जाई,, इत्यादि वाक्य लिखना हिन्दी की कविता को कलङ्कित करना है!

शब्दों को यथा-स्थान रखना चाहिए। शब्द-स्थापना ठीक न होने से कविता की जो दुर्दशा होती है और अर्थांश में जो क्लिष्टता आ जाती है, उसके उदाहरण "हिन्दी-कालिदास की समालोचना" में दिये जा चुके हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:


गद्य और पद्य की भाषा पृथक्-पृथक् न होनी चाहिए। हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जिसके गद्य में एक प्रकार की और पद्य में दूसरे प्रकार की भाषा लिखी जाती है। सभ्य-समाज की जो भाषा हो उसी भाषा में गद्य-पद्यात्मक साहित्य होना चाहिए। गद्य का प्रचार हिन्दी में थोड़े दिनों से हुआ है। पहले गद्य प्रायः न था; हमारा साहित्य केवल पद्यमय था। गद्य-साहित्य की उत्पत्ति के पहले पद्य में ब्रजभाषा ही का सार्वदेशिक प्रयोग होता था। अब कुछ अन्तर होने लगा है। गद्य की इस समय, उन्नति हो रही है। अतएव अब यह सम्भव नहीं की गद्य की भाषा का प्रभाव पद्य पर न पड़े। जो प्रबल होता है वह निर्बल को अवश्य अपने वशीभूत कर लेता है। यह बात भाषा के सम्बन्ध में भी तद्वत् पाई जाती है। पचास वर्ष पहले के कवियों की भाषा इस समय के कवियों की भाषा से मिला कर देखिए। देखने से तत्काल विदित हो जायगा कि आधुनिक कवियों पर बोल-चाल की हिन्दी-भाषा ने अपना प्रभाव डालना आरम्भ कर दिया है; उनकी लिखी ब्रज-भाषा की कविता में बोल-चाल (खड़ी बोली) के जितने शब्द और मुहाविरे मिलेंगे उतने ५० वर्ष पहले के कवियों की कविता में कदापि न मिलेंगे। यह निश्चित है कि किसी समय बोल-चाल की हिन्दी भाषा, ब्रजभाषा की कविता के स्थान को अवश्य छीन लेगी। इसलिए कवियों को चाहिए कि वे क्रम-क्रम से गद्य की भाषा में भी कविता करना आरम्भ करें बोलना एक भाषा और कविता में प्रयोग करना दूसरी भाषा, प्राकृतिक नियम के विरुद्ध है। जो लोग हिन्दी बोलते हैं और हिन्दी ही के गद्य साहित्य की सेवा करते हैं, उनके पद्य में ब्रज की भाषा का आधिपत्य बहुत दिनों तक नहीं रह सकता।

## अर्थ

अर्थ-सौरस्य ही कविता का प्राण है। जिस पद्य में अर्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



का चमत्कार नहीं, वह कविता ही नहीं। कवि जिस विषय का वर्णन करे उस विषय से उसका तादात्म्य हो जाना चाहिए। ऐसा न होने से अर्थ-सौरस्य नहीं आ सकता। विलाप-वर्णन करने में कवि के मनमें यह भावना होनी चाहिए कि स्वयं विलाप कर रहा है और वर्णित दुःख का स्वयं अनुभव कर रहा है। प्राकृतिक वर्णन लिखने के समय उसके अन्तःकरण में यह दृढ़ संस्कार होना चाहिए कि वर्ण्यमान नदी, पर्वत अथवा वन के सम्मुख वह स्वयं उपस्थित होकर उनकी शोभा देख रहा है। जब कवि की आत्मा का वर्ण्य-विषयों से इस प्रकार निकट सम्बन्ध हो जाता है, तभी उसका किया हुआ वर्णन यथार्थ होता है और तभी उसकी कविता पढ़कर पढ़ने वालों के हृदय पर तद्वत् भावानाएँ उत्पन्न होती हैं। कविता करने में, हमारी समझ में अलङ्कारों को बलात् लाने का प्रयत्न न करना चाहिए। विषय-वर्णन के झोंके में जो कुछ मुख से निकले उसे ही रहने देना चाहिए। बलात् किसी अर्थ के लाने की चेष्टा करने की अपेक्षा प्राकृति भाव से जो कुछ आ जाय उसे ही पद्य-बद्ध कर देना अधिक सरस और आह्लादकारक होता हैं। अपने मनोनीत अर्थ को इस प्रकार व्यक्त करना चाहिए कि पद्य पढ़ते ही पढ़ने वाले उसे तत्क्षण हृदयङ्गम कर सकें, क्लिष्ट कल्पना अथवा सोच-विचार करने की आवश्यकता न पड़े।

बहुत से शब्द ऐसे हैं जो सामान्य रीति से सब एक ही अर्थ के व्यञ्जक हैं, परन्तु विशेष ध्यानपूर्वक देखने अथवा धातु के अर्थ का विचार करने से पृथक्-पृथक् शब्दों में पृथक्-पृथक् शक्तियों का गर्भित रहना प्रकट होता है। 'तन्वी' शब्द का सामान्य अर्थ स्थल विशेष में स्त्री होता है। परन्तु 'तनु' शब्द का अर्थ कृश होने के कारण 'तन्वी' का विशेष अर्थ दुर्बल है। यदि कहें कि "यह तन्वी अपने पति के साथ सुख से अपने घर

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



में रहती है" तो यहाँ 'तन्वी, शब्द उस अर्थ का व्यञ्जक नहीं हो सकता जो अर्थ 'रामा' इत्यादि शब्दों का होता है। परन्तु यदि कहें कि "तन्वी अपने प्रियतम का वियोग बड़े धैर्य से सहन कर रही है" तो यहाँ 'तन्वी शब्द की गभित शक्ति से वियोग-द्योतक अर्थ को सहायता पहुँचती है। अतः ऐसे स्थल पर इस शब्द का प्रयोग बहुत प्रशस्त है। अर्थ-सौरस्य के लिए जहाँ तक सम्भव हो, ऐसे शक्तिमान् शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

घनाक्षरी और सवैया आदि लिखने वाले कुछ कवियों की कविता में कभी-कभी अनेक निरर्थक शब्द आ जाते हैं। कभी-कभी शब्दों के ऐसे विकृत-रूप प्रयुक्त हो जाते हैं कि उनका अर्थ ही समझ में नहीं आता। कभी-कभी पादान्त में समान अक्षर लाने ही के लिए निरर्थक अथवा अपभ्रंश शब्द लाये जाते हैं। ब्रज-भाषा की कविता, अथवा घनाक्षरी या सवैया के हम प्रतिकूल नहीं, परन्तु हमारा मत यह है कि अर्थ के सौरस्य ही की ओर कवियों का ध्यान अधिक होना चाहिए, शब्दों के आडम्बर की ओर नहीं। अर्थ-हीन अथवा अनुपयोगी शब्द न लिखे जाने चाहिए और न शब्दों के प्रकृत रूप को बिगाड़ना ही चाहिए। शब्दों के बिगाड़ने से उनके बिगड़े हुए रूप पढ़ने वालों के कान को खट-कते हैं और जिस अर्थ में वे प्रयुक्त होते हैं, उस अर्थ की वे कभी-कभी पोषकता भी नहीं करते।

अश्लीलता और ग्राम्यता-गर्भित अर्थों से कविता को कभी न दूषित करना चाहिए और न देश, काल तथा लोक आदि के विरुद्ध कोई बात कहनी चाहिए। कविता को सरस बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। नीरस पद्यों का कभी आदर नहीं होता। जिसे पढ़ते ही पढ़ने वाले के मुख से 'वाह' न निकले, अथवा उसका मस्तक न हिलने लगे, अथवा उसकी दन्त-पंक्ति न दिख-लाई देने लगे, अथवा जिस रस की कविता है, उस रस के अनु-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कूल वह व्यापार न करने लगे, तो वह कविता ही नहीं, वह तुकबन्दी मात्र है। कविता के सरस होने ही से ये उपर्युक्त बातें हो सकती हैं, अन्यथा नहीं। रस ही कविता का सबसे बड़ा गुण है। श्रीकण्ठ-चरित के कर्ता ने ठीक कहा है—

तैस्तैरलंकृतिशतैरवतंसितोऽपि
रूढो महत्यपि पदे धृतसौष्ठवोऽपि।
नूनं विना घनरस-प्रसराभिषेकं
काव्याधिराजपदमहर्ति न प्रबन्धः॥

अर्थात् सैकड़ों अलङ्कार से अलंकृत हो कर भी, शब्द-शास्त्र के उच्चासन पर अधिरूप हो कर भी और सब प्रकार सौष्ठव को धारण करके भी रस-रूपी अभिषेक के बिना, कोई भी प्रबन्ध काव्याधिराज पदवी को नहीं पहुँचता।

## विषय

कविता का विषय मनोरञ्जक और उपदेश-जनक होना चाहिए। यमुना किनारे केलि-कौतूहल का अद्भुत-अद्भुत वर्णन बहुत हो चुका। न परकीयाओं पर प्रबन्ध लिखने की अब कोई आवश्यकता है और न स्वकीयाओं के "गतागत" की पहेली बुझाने की। चींटी से लेकर हाथी पर्य्यन्त पशु; भिक्षुक से लेकर राजा पर्य्यन्त मनुष्य; बिन्दु से लेकर समुद्र पर्य्यन्त जल; अनंत आकाश; अनंत पर्वत—सभी पर कविता हो सकती है; सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी के वर्णन से मनोरञ्जन हो सकता है। फिर क्या कारण है कि इन विषयों को छोड़ कर कोई-कोई कवि स्त्रियों की चेष्टाओं का वर्णन करना ही कविता की चरम सीमा समझते हैं? केवल अविचार और अंध-परम्परा! यदि "मेघनाद-वध" अथवा "यशवंतराव महाकाव्य" वे नहीं लिख सकते, तो उनको ईश्वर की निःसीम सृष्टि में छोटे-छोटे सजीव अथवा निर्जीव पदार्थों को

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



चुन कर उन्हीं पर छोटी-छोटी कविताएँ करनी चाहिए। अभ्यास करते-करते शायद, कभी, किसी समय, वे इससे अधिक योग्यता दिखलाने में समर्थ हों और दण्डी कवि के कथनानुसार*शायद कभी वाग्देवी उन पर सचमुच ही प्रसन्न हो जाय। नायिका के हाव-भावादिक के वर्णन का अभ्यास करने वालों पर भी सरस्वती की कृपा हो सकती है; परन्तु तदर्थ उसकी उपासना न करना ही अच्छा है।

संस्कृत में सहस्रशः उत्तमोत्तम काव्य विद्यमान हैं। अतः उस भाषा में काव्यप्रकाश, ध्वन्यालोक, कुवलयानन्द, रसतरंगिणी आदि साहित्य के अनेक लक्षण-ग्रंथों का होना अनुचित नहीं। परंतु हिंदी-भाषा में सत्काव्य का प्रायः अभाव है। इस कारण अलंकार और रस-विवेचन के झगड़ों से जटिल ग्रंथों के बनने की हम कोई आवश्यकता नहीं देखते। 'हेला' हाव का लक्षण और उसका चित्र देखने से लाभ ? अथवा दीपक अलङ्कार के सूक्ष्म से सूक्ष्म भेदों को जानने का क्या उपयोग ? हिन्दी में ऐसे कितने काव्य हैं जिसमें से सब भेद पाये जाते हैं ? हमारी अल्प-बुद्धि के अनुसार रस कुसुमाकर और जसवन्तजसो (!) भूषण के समान ग्रंन्थों की इस समय, आवश्यकता नहीं। इसके स्थान में यदि कोई कवि किसी आदर्श पुरुष के चरित्र का अवलंबन करके एक अच्छा काव्य लिखता तो उससे हिन्दी-साहित्य को अलभ्य

---

* न विद्यते यद्यपि पूर्व वासना गुणानुबंधि प्रतिभानमद्भुतम्।
श्रुतेन यत्नेन च वागुपासिता ध्रुवं करोत्येव किमप्यनुग्रहम् ॥

—काव्यादर्श

अर्थात्—पूर्व वासना और अद्भुत प्रतिभा न होने पर भी शास्त्र के अनुशीलन और यत्न के अभिनिवेश द्वारा उपासना की गयी सरस्वती अनुग्रह अवश्य ही करती हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



लाभ होता। कनिष्ठा और ज्येष्ठा का भेद और उनके चित्र देखे तो क्या और न देखे तो क्या? और उत्प्रेक्षा अलङ्कार का लक्षण नामानुसार सिद्ध हो गया तो क्या और न सिद्ध हुआ तो क्या? नायिकाओं के भी झगड़े में उलझने से हानि के अतिरिक्त लाभ की कोई सम्भावना नहीं। हिन्दी काव्य की हीन दशा को देख कर कवियों को चाहिए कि वे अपनी विद्या, अपनी बुद्धि और अपनी प्रतिभा का दुरुपयोग इस प्रकार के ग्रंथ लिखने में न करें। अच्छे काव्य लिखने का उन्हें प्रयत्न करना चाहिए। अलङ्कार, रस और नायिका-निरूपण बहुत हो चुका।

इस समय कवियों का एक दल कवि-समाजों और कवि-मण्डलों में बद्ध होकर समस्या-पूर्ति करने में व्यग्र हो रहा है। इन पूर्तिकारों में से कुछ को छोड़ कर शेष, कविता के नाम की बड़ी ही अवहेलना कर रहे हैं। इनको चाहिए कि बिना योग्यता सम्पादन किये सयस्या-पूर्ति करने के झगड़े में न पड़ें। अच्छी समस्या-पूर्ति करना असाधारण प्रतिभावान का काम है। एक साधारण कवि अपने मनोऽनुकूल विषय पर एक ही घड़ी में चाहे ५० पद्य लिख डाले और वे सब चाहे अच्छे भी हों; परन्तु किसी समस्या के टुकड़े पर अच्छी कविता करने में वह शायद ही सफल-मनोरथ होगा। समस्या-पूर्ति के लिए असामान्य कौशल और प्रबल प्रतिभा की आवश्यकता है। इस समय प्रतिभा का पूरा-पूरा विकास बहुत कम देखा जाता है। इसलिए समस्याओं की पूर्तियाँ भी प्रायः अच्छी नहीं होतीं हमारी यह सम्मति है कि समस्या-पूर्ति के विषय को छोड़ कर, अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार विषयों को चुन कर, कवि को यदि बड़ी न हो सके, तो छोटी ही छोटी स्वतन्त्र कविता करनी चाहिए; क्योंकि इस प्रकार की कविताओं का हिन्दी में प्रायः अभाव है।

संस्कृत और अंगरेजी काव्यों का अनुवाद हिन्दी में करने की ओर भी कवियों की रुचि बढ़ने लगी है। परन्तु स्वतन्त्र कविता

२

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



करने की अपेक्षा दूसरे की कविता का अनुवाद अन्य भाषा में करना बड़ा कठिन काम है। एक शीशी में भरे हुए इत्र को जब दूसरी शीशी में डालने लगते हैं तब डालने ही में पहले कठिनता उपस्थित होती है; और यदि बिना दो चार बूँद इधर-उधर टपके वह दूसरी शीशी में चला भी गया, तो इस उलट-फेर में उसके सुवास का विशेषांश अवश्य उड़ जाता है। एक भाषाकी कविता का दूसरी भाषा में अनुवाद करने वालों को यह बात स्मरण रखनी चाहिए। बुरा अनुवाद करना मूल कवि का अपमान करना है; क्योंकि अनुवाद के द्वारा उनके गुणों का ठीक-ठीक परिचय न होने के कारण पढ़ने वालों की दृष्टि में वह हीन हो जाता है। इसलिए किसी पुस्तक का अनुवाद आरम्भ करने के पहले अनुवादक को अपनी योग्यता का विचार कर लेना नितान्त आवश्यक है। सच तो यह है कि जो अच्छा कवि है वही अच्छा अनुवाद करने में समर्थ हो सकता है; दूसरा नहीं। परंतु अच्छा कवि होना भी दुर्लभ है। महाकवि मंखक ने ठीक कहा है--

तान्यर्थरत्नानि न संति येषां सुवर्णसंघेन च ये न पूर्णाः।
ते रीतिमात्रेण दरिद्र-कल्पा यान्तीश्वरत्वं हि कथं कवीनाम्॥

अर्थात--अर्थ-रत्न और स्वर्ण-समूह से जो परिपूर्ण नहीं है, वे महादरिद्री लोग केवल रीति-मात्र का अवलम्बन कर के कवीश्वर की पदवी कदापि नहीं पा सकते।

काव्य के गुणों और दोषों की विवेचना संस्कृत की जिन पुस्तकों में है, उनमें कवियों के कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य पर बहुत कुछ कहा गया है। परंतु उन सब बातों का विचार हम यहाँ पर नहीं कर सकते। केवल स्थूल-स्थूल बातों ही के विचार की इच्छा से हमने यह लेख आरम्भ किया था। अतएव, अब हम इसे यहीं समाप्त करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding



[ २ ]

संसार में ईश्वर या देवताओं का अवतार कई प्रकार का और कई कामों के लिए होता है। अलौकिक कार्य करने वाले प्रतिभा-शाली मनुष्य ही अवतार हैं। स्वाभाविक कवि भी एक प्रकार के अवतार हैं। इस पर कदाचित् कोई प्रश्न करे कि अकेले कवि ही क्यों अवतार माने गये, और लेखक इस पद पर क्यों न बिठाये गये ? तो यह कहा जा सकता है कि लेखक का समावेश कवि में है, पर कवियों में कुछ ऐसी विशेष शक्ति होती है, जिसके कारण उनका प्रभाव लोगों पर बहुत पड़ता है। अब मुख्य प्रश्न यह है कि कवि का अवतार होता ही क्यों है ? पहुँचे हुए पण्डितों का कथन है कि कवि भी "धर्म्म-संस्थापनार्थाय" उत्पन्न होते हैं। उनका काम केवल तुक मिलाना या "पावसपचासा" लिखना ही नहीं। तुलसीदास ने कवि होकर वैष्णव-धर्म की स्थापना की है, मत-मतांतरों का भेद मिटाया है और "ज्ञान के पंथ को कृपाण की धार" बताया है। प्रायः उसी प्रकार का काम, दूसरे रूप में, सूरदास, कबीर और लल्लूलाल ने किया है। हरिश्चन्द्र ने शूरता, स्वदेश-भक्ति और सत्य प्रेम का धर्म चलाया है। जिन कवियों ने केवल संस्कृत भाषा ही का भण्डार भरा है वे भी, किसी न किसी रूप में, लोगों के उपदेशक थे। हिंदी के जितने कवि प्रसिद्ध हैं उन्होंने देश, काल, अवस्था और पात्र के अनुसार ही कविता की है। दूसरे देशों और दूसरी भाषाओं के कवियों का नाम लेने की यहाँ आवश्यकता नहीं; क्योंकि हिंदी के पूर्ववर्ती कवियों ने समय-समय पर, अपने कर्त्तव्य को समझा है और उसका पालन भी किया है। राजा शिवप्रसाद-सदृश इतिहासकारों ने भी अवतार का काम किया है, यद्यपि उनके विचारों को लोग मानते नहीं। सारांश यह कि कवियों को ऐसा काम करना पड़ता है—वे स्वभाव ही से ऐसा

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



करते हैं कि—संसार का कल्याण हो और इस प्रकार उनका नाम आप ही आप अमर हो जाय। भूषण के समान कवियों ने तो राजनीतिक आन्दोलन तक उपस्थित कर दिया है। "पूर्ण" कवि ने हमें यह उपदेश दिया है कि जो लोग बोलचाल की भाषा से किसी प्रकार अप्रसन्न हैं वे भी अपनी पुरानी ब्रज (कविता) की बोली को बिना तोड़े-मरोड़े काम में ला सकते हैं, और यदि वे चाहें तो बोलचाल की भाषा में भी कविता कर सकते हैं। सारांश यह कि कविता लिखते समय कवि के सामने एक ऊँचा उद्देश्य अवश्य रहना चाहिये। केवल कविता ही के लिये कविता करना एक तमाशा है। हिंदी में कविता-सम्बन्धी इस प्रकार के लेख पढ़-कर बाहर के लोग यह अनुमान कर सकते हैं कि कदाचित् हिंदी के कवि अपना कर्त्तव्य नहीं जानते; नहीं तो उनके लिये ऐसा लेख न लिखा जाता। यदि कोई मराठी या बंगला के समाचार-पत्र या मासिक पत्र पढ़े, तो उसे उनमें ऐसे लेख न मिलेंगे। ऐसे लेख उन भाषाओं में कम से कम चालीस वर्ष पहिले निकल चुके हैं। और उन लेखों के अनुसार उन भाषाओं की कविता इतने समय में इतनी ऊँची हो गयी है कि समालोचकों के लिये जन्म भर विचार करने की सामग्री तैयार है। भाषा या साहित्य की जब जैसी अवस्था होती है, तब उसमें उसी प्रकार के लेख निकलते हैं। हम यहाँ पर इस विषय का एक उदाहरण देते हैं। एक बार "छत्तीसगढ़-मित्र" में हिंदी व्याकरण के विषय में कुछ लेख निकले थे। उस पर एक महाराष्ट्र सज्जन ने बम्बई के सम्पादक से पूछा कि क्या हिंदी में भी व्याकरण नहीं? इस पर सुनने में आया कि सम्पादक ने उनको यह उत्तर दिया कि और-और भाषाओं के समान हिन्दी में कोई व्याकरण है। परंतु इस विषय का निरूपण विदेशियों ने किया है। हिन्दुस्तानी लोग न उसे खोज सके हैं और न खोज हो जाने पर भी उसकी ओर ध्यान देते हैं।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmanc

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कवि की कल्पना-शक्ति तीव्र होती है। इस कल्पना शक्ति के द्वारा वह कठिन बातों को ऐसे अनोखे ढंग से सब के सामने रखता है कि वे सहज ही समझ में आजाती हैं। इसी शक्ति से वह अनजाने हुए पदार्थों या दृश्यों का चित्र इतना मनोहर खींचता है कि पढ़ने या सुननेवाले एकाग्रचित्त हो जाते हैं और उस बात पर प्रेम-पूर्वक विचार करते हैं। फिर कवि अपने अवलोकन और अपनी कल्पना से ऐसी शिक्षा देता है कि वह न तो आज्ञा का रूप धारण करती है और न अपना स्वाभाविक रूखापन ही प्रकट करती है, किन्तु भीतर ही भीतर मन को उकसा देती है। ताजमहल का वर्णन करते समय कवि इस बात पर ध्यान न देगा कि यह किस सन् में बना था, इसकी लम्बाई-चौड़ाई कितनी है यह इसका पत्थर कहाँ से आया है? इमारत को देखकर उसका मन कदाचित् उसके मीनार से भी ऊँचा चढ़ जायगा और वह उस समय की कल्पना करने लगेगा जब बादशाह की बेगम, मरते समय रौजे की वसीयत कर रही थी। उसके मन में पुराने और नये समय के मिलान का भी चित्र खिंच जायगा और वह समय के फेर की घटनाओं को सोचने लगेगा। मनोहर वर्णन और शिक्षा के साथ-साथ कवि अपने शब्द और वाक्य भी ऐसे मनोहर बनाता है कि पढ़नेवाले के आनंद की सीमा नहीं रहती। कविता लिखते समय जो-जो भाव कविके हृदय में उदित होते हैं, वही भाव पढ़ने वाले के हृदय में उत्पन्न हो सकते हैं। इसके लिये पढ़नेवाला सहृदय होना चाहिये, नहीं तो भैंस के आगे बीन बजने लगेगी। यदि स्वतः कवि में सहृदयता न हो तो फिर उसका श्रम ही वृथा है। मनोविज्ञानी लोग कदाचित् किसी समय हमको यह बता सकेंगे कि मनोविकार प्रकट करने के लिए छंद ही का उपयोग क्यों होता है? गद्य में कोई-कोई लेखक—विशेषकर उपन्यास लेखक—ऐसा मनोहर वर्णन करते हैं और

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



ऐसे भाव प्रकट करते हैं कि उनका गद्य पद्य हो जाता है। जो हो अभी तो कवि लोग ही विशेषकर यह काम करते हैं और उसके लिए छंद काम में लाते हैं।

आजकल हिंदी संक्रांति की अवस्था में है। हिन्दी-कवि का कर्त्तव्य यह है कि वह लोगों की रुचि का विचार रख कर अपनी कविता ऐसी सहज और मनोहर रचे कि साधारण पढ़े-लिखे लोगों में भी पुरानी कविता के साथ-साथ नई कविता पढ़ने का अनुराग उत्पन्न हो जाय पढ़ने वालों के मन में नई-नई उपमाओं को नये-नये शब्दों को और नये नये विचारों को समझने की योग्यता उत्पन्न करना कवि का ही कर्त्तव्य है। जब लोगों का झुकाव इस ओर होने लगे तब, समय-समय पर, कल्पित अथवा सत्य आख्यानों द्वारा सामाजिक, नैतिक और धार्मिक विषयों की मनोहर शिक्षा दे। जब जो विषय उसके अवलोकन में आवे, तभी उस पर अपनी स्वाभाविक शक्ति से कविता लिखकर लोगों को परोक्ष-रूप से सचेत करे। कविता के प्रभाव का एक छोटा-सा उदाहरण सुनिए। पद्माकर कवि के घराने के लोगों में विवाह के समय कवित्त पढ़ने की चाल है। उनकी जाति के लोग कहते हैं कि यह चाल पद्माकर के समय से चली है और वह अब तक चली जाती है। क्या यह बात आज-कल के कवियों में नहीं हो सकती? जान पड़ता है कि "अब के कवि खद्योत सम जहँ-तहँ करहिं प्रकाश"—जिसने यह दोहा लिखा है उसको बड़ी दूर की सूझी है। बोल—चाल की भाषा में आज तक ऐसी कोई कविता नहीं* बनी, जिसका प्रचार "चंद्र-कांता" के समान साधारण पढ़े-लिखे लोगों में भी हुआ हो।

* यह आसन अब 'भारत-भारती' और 'जयद्रथ-बध' को मिल गया है। १६१८।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



सदोष होने पर भी इस उपन्यास के कारण पुरुषों और स्त्रियों में उपन्यास पढ़ने की रुचि उत्पन्न हुई है। इसी प्रकार जब बोल-चाल की भाषा की कविता को, या आजकल के और दूसरे पद्यों को साधारण लोग भी पढ़ने लगें, तब समझना चाहिए कि कविता और कवि लोक-प्रिय हैं। आजकल की संस्कृत-भरी कविता का रचा जाना और भी हानिकारक है।

सारांश यह कि यदि आजकल को कविता में शास्त्रोक्त गुणों को छोड़कर नीचे लिखे हुये गुण हों तो सम्भव है कि वह लोक-प्रिय होगी—

( १ ) कविता में साधारण लोगों की अवस्था, विचार और मनोविकारों का वर्णन हो।

( २ ) उसमें धीरज, साहस, प्रेम और दया आदि गुणों के उदाहरण रहें।

( ३ ) कल्पना सूक्ष्म और उपमादिक अलङ्कार गूढ़ न हों।

( ४ ) भाषा सहज, स्वाभाविक और मनोहर हो।

( ५ ) छंद सीधा, परिचित, सुहावना और वर्णन के अनुकूल हो।

——

## २—कवि बनने के लिए सापेक्ष साधन

आजकल हिंदी कवियों ने बड़ा जोर पकड़ा है। जिधर देखिए उधर कवि ही कवि। जहाँ देखिए वहाँ कविता ही कविता। कवि बनाने के कारखाने भी रात-दिन जारी हैं। कोई कहता है, हमारे पिङ्गल के प्रचार से गाँव-गाँव में कवि हो सकते हैं। कोई कहता है, हमारा काव्य-कल्पद्रुम पढ़ लेने से सैकड़ों कालिदास पैदा हो सकते हैं। कोई कहता है, हमारा काव्य-भास्कर ही कवि बनने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



के लिए एक मात्र साधन है; उसकी एक ही झाँकी मनुष्य को कवित्व की प्राप्ति करा सकती है। कोई कहता है, हमारी सभा की दी हुई समस्याओं की पूर्तियाँ करने से अनेक व्यास और वाल्मीकि फिर जन्म ले सकते हैं। शायद इन्हीं लोगों के उद्योग का फल है जो हिंदी में आजकल इतने कवियों का एक ही साथ प्रादुर्भाव हो गया है। पर, इन कविता कुबेरों के प्रादुर्भाव से सरस हृदय सज्जन बहुत तङ्ग हो रहे हैं। जो काम बहुत कठिन समझा गया है, वह इन कवियों के लिए खेल हो रहा है। कविता करना अन्य लोग चाहे जैसा सहज समझें हमें तो यह एक तरह दुःसाध्य ही जान पड़ता है। अज्ञात और अविवेक के कारण कुछ दिन हमने भी तुकबंदी का अभ्यास किया था। पर कुछ समझ आते ही हमने अपने को इस काम का अनधिकारी समझा। अतएव उस मार्ग से जाना ही प्रायः बंद कर दिया।

विक्रम के ग्यारहवें शतक में, काश्मीर में, अनंतदेव नामक एक राजा था। उसके शासन-समय में क्षेमेंद्र नामक एक महाकवि हो गया है। वह बहुज्ञ, बहुश्रुति और बहुदर्शी विद्वान् था। उसकी प्रतिभा बड़ी ही विलक्षण थी। उसकी बुद्धि इतनी व्यापक और सूक्ष्म थी कि प्रत्येक विषय उसके लिए हस्तामलकवत् था। उसने, न मालूम, कितने ग्रंथ बना डाले। उनमें से दस-बीस तो छप कर प्रकाशित भी हो गये हैं। अपने शिष्यों की शिक्षा के लिए छोटे-छोटे ग्रंथ तो हँसते-हँसते बना डालता था। जरा उसकी बुद्धि की व्यापकता तो देखिए। कभी तो आप वेदांत पर ग्रंथ लिखते थे, कभी कुट्टिनियों की लीला का उद्घाटन करने के लिए "समय-मातृका" निर्माण करते थे, कभी "दशावतार-चरित" लिखकर विष्णु भगवान् की लीला का वर्णन करते थे, कभी बौद्धधर्म के तत्त्वों से भरा हुआ महाकाव्य लिखते थे, कभी काव्य और छंदः पर शास्त्रग्रंथ रचना करते थे और कभी "कलाविलास" बनाने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



बैठ जाते थे। इसीसे कहते हैं कि क्षेमेंद्र की प्रतिभा बड़ी प्रखर थी। क्षेमेंद्र का 'बोधिसत्वावान कल्पलता, नामक ग्रंथ एक अपूर्व काव्य है। उसकी भाषा प्राञ्जल और भाव तथा कवित्व बहुत मनोहारी है। इस ग्रंथ का एक तिब्बतीय अनुवाद, अभी कुछ ही समय हुआ, प्राप्त हुआ है। इसे बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी प्रकाशित कर रही है। श्रीयुत शरच्चन्द्र दास इसके सम्पादक हैं।

क्षेमेन्द्र कवि ने 'कवि-कण्ठाभरण' नाम का एक छोटा-सा ग्रन्थ लिखा है। उसमें आपने बताया कि किन साधनों से मनुष्य कवि हो सकता है और किस तरह उसकी तुकबन्दी कविता कहलायी जाने योग्य हो सकती है। क्षेमेन्द्र खुद भी महाकवि था। अतएव उसके बताये हुए साधन अवश्य ही बड़े महत्त्व के होने चाहिए। यही समझकर हम अपने हिंदी के कवियों के जानने के लिए क्षेमेन्द्र के निर्दिष्ट साधनों को थोड़े में उल्लेख करते हैं।

कवि होने के लिये पाँच बातें अपेक्षित हैं। वे पाँच बातें ये हैं—(१) कवित्व-शक्ति (२) शिक्षा (३) चमत्कारोत्पादन (४) गुण-दोष-ज्ञान (५) परिचय-चारुता।

अब इन पाँचों का संक्षिप्त विवेचन सुनिए।

## कवित्व-शक्ति

किसी-किसी में कवित्व-शक्ति बीज-रूप से रहती है। उसे अंकुरित करना पड़ता है। जिसमें वह नहीं होती वह अच्छा कवि नहीं हो सकता। कवित्व-शक्ति को जागृति करने के दो उपाय हैं—दिव्य और पौरुषेय।

सरस्वती देवी के क्रियामातृका—मन्त्र जप करना उसकी मूर्ति... का ध्यान करना और उसके यन्त्र का पूजन करना इत्यादि दिव्य उपाय हैं।

पौरुषेय उपाय यह है कि किसी अच्छे कवि को गुरु बनाकर उससे यथाविधि काव्यशास्त्र का अध्ययन करना।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कवि बनने की इच्छा से काव्य-शास्त्र का अध्ययन करने वाले शिष्य तीन प्रकार के होते हैं—अल्पप्रयत्न-साध्य, कृच्छ्रसाध्य और असाध्य।

थोड़े ही अध्ययन से जो सफल-मनोरथ हो जायँ वे अल्प-प्रयत्न–साध्य, अध्ययन में विशेष परिश्रम करने से जिन्हें इष्टलाभ हो वे कृच्छ्रसाध्य; जो बरसों सिर पीटने पर भी कुछ न कर सकें वे असाध्य समझे जाते हैं।

अल्प-प्रयत्न-साध्य शिष्यों के कर्त्तव्य सुनिए।

ऐसे पुरुषों को चाहिए कि वे किसी अच्छे साहित्य ज्ञाता कवि से अध्ययन करें। जो केवल तार्किक या वैयाकरण हो उससे सदा दूर रहें। जो सरस-हृदय हो, स्वयं कवि हो, व्याकरण भी जानता हो, छंदग्रन्थों का भी पारगामी हो उसे गुरु बनाना चाहिये। अच्छे-अच्छे काव्यों को उसके मुख से सुनना चाहिए। गाथा, प्राकृत अन्यान्य प्रांतीय भाषाओं के पद्यों को भी सावधान श्रवण करना चाहिए। चमत्कार-पूर्ण उक्तियों के विषय में चर्चा करनी चाहिए। प्रत्येक रस के आस्वादन में तन्मय हो जाना चाहिए। जहाँ जिस गुण का प्रकर्ष हो वहाँ अभिनंदन करके आनंदित होना चाहिये। विवेक-बुद्धि द्वारा भले बुरे काव्य को पहिचानने की चेष्टा करनी चाहिए। ऐसा करते-करते कुछ दिनों में कवित्व-शक्ति अंकुरित हो उठती है और उस शक्ति से सम्पन्न होने पर कविता करने की योग्यता आ जाती है।

कृच्छ्रसाध्य जनों को चाहिए कि कालिदास आदि सत्कवियों के सारे प्रबंधों को आद्यंत पढ़ें और खूब विचार-पूर्वक पढ़ें। इतिहासों का भी अध्ययन करें। तार्किकों की उग्र-संधि से दूर ही रहें। कविता के मधुर सौरभ को उससे नष्ट होने से बचाते रहें। अभ्यास के लिए कोई नया पद्य लिखें तो महाकवियों की शैली को सदा ध्यान में रक्खें। पुराने कवियों के श्लोकों के पाद, पद और

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



वाक्य आदि को निकाल कर उनकी जगह पर अपने बनाये पाद, पद और वाक्य रक्खें। अभ्यास बढ़ाने के लिये वाक्यार्थ-शून्य पद्य बनावें। कभी-कभी अन्य कवियों की रचना में फेर-फार करके, कुछ अपना कुछ उनका रखकर, नूतन अर्थ का समावेश करने की चेष्टा करें।

जो लोग किसी बड़े रोग से पीड़ित हैं, व्याकरण और तर्क-शास्त्र के सतताभ्यास से जिनकी सहृदयता नष्ट हो गयी है, अत-एव सुकवियों की कविता सुनने से भी जिन्हें कुछ भी आनंद नहीं प्राप्त होता, उन्हें असाध्य समझना चाहिए। उनका हृदय पत्थर के समान कड़ा हो जाता है; उनकी कोमलता बिलकुल ही जाती रहती है।

न तस्य वक्तृत्वसमुद्भवः स्याच्छिक्षाविशेषैरपि सुप्रयुक्तैः।
न गर्दभो गायति शिक्षितोऽपि सन्दर्शितं पश्यति नार्कमन्धः॥

उसे चाहे कैसा ही अच्छा गुरू क्यों न मिले और चाहे कितनी ही अच्छी शिक्षा क्यों न दी जाय वह कवि नहीं हो सकता। सिखलाने से भी क्या गधा कभी गीत गा सकता है और हजार दफे दिखलाने से भी क्या अंधा कभी सूर्य को देख सकता है!

## शिक्षा

कवित्व-शक्ति स्फुरित हो जाने पर क्या करना चाहिए—किस तरह शिक्षा से उसकी प्रखरता को बढ़ाना चाहिए—सो भी सुनिए।

प्राप्त-कवित्व-शक्ति कवि को चाहिए कि वह वृत्त पूरण करने का उद्योग करे; समस्या पूर्ति करे; दूसरे की कविताओं का पाठ किया करे; काव्य के अङ्गों का ज्ञान प्राप्त करे, सत्कवियों की संगति करे; महाकवियों के काव्यार्थ का विचार किया करे; प्रसन्न चित्त रहे; अच्छे वेश में रहा करे; नाटकों का अभिनय देखे; गाना सुनने का शौक रक्खे, लोकाचार का ज्ञान प्राप्त करे; इतिहास देखे, चित्रकारों के अच्छे अच्छे चित्रों और शिल्पियों के अच्छे-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अच्छे शिल्पकार्यों का अवलोकन करे वीरों का युद्ध देखे; श्मशान और अरण्य में घूमे और आर्त्त तथा दुःखी मनुष्यों के शोक-प्रलाप पूर्ण बचन सुने। इन सब बातों से शिक्षा प्राप्त करना उसके लिए बहुत जरूरी है।

परंतु इतनी ही शिक्षा बस नहीं और भी उसे बहुत कुछ करना चाहिए; उसे मीठा और स्निग्ध भोजन करना चाहिए; धातुओं को सम रखना चाहिए; कभी शोक न करना चाहिए; दिन में कुछ सो लेना चाहिए और थोड़ी रात रहे जाग कर अपनी प्रतिभा को प्रखर करना चाहिए। उस समय कुछ कविता करनी चाहिए; प्राणियों के स्वभाव की परीक्षा करनी चाहिए; समुद्र-तट और पर्वतों की सैर करनी चाहिए; सूर्य, चन्द्रमा और तारागणों के स्थान और उनकी गति आदि का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए; सब ऋतुओं की विशेषता और उनका भेद समझना चाहिए; सभाओं में जाना चाहिये; एक बार लिखी हुई कविता का संशोधन दो तीन दफे करके उसे खूब परिमार्जित करना चाहिए।

सुकवि होने की इच्छा रखने वाले के लिए अभी और भी बहुत से काम हैं। उसे पराधीनता में न रहना चाहिए; अपने उत्कर्ष पर गर्व न करना चाहिए; पराये उत्कर्ष को सहने की आदत डालनी चाहिए; दूसरे की श्लाघा सुनकर उसका अभिनंदन करना चाहिए, अपनी श्लाघा सुनने में संकोच करना चाहिए; व्युत्पत्ति के लिए—शिक्षा या विद्या-वृद्धि के लिए सब की शिष्यता स्वीकार करने को तैयार रहना चाहिए; सन्तुष्ट रहना चाहिए; सत्वशील बनना चाहिए; किसी से याञ्चा न करनी चाहिए; ग्राम्य और अश्लील बात मुँह से न निकालनी चाहिए; निर्विकार रहना चाहिए; गाम्भीर्य्य धारण करना चाहिए; दूसरे के द्वारा किये गये आक्षेप सुन कर बिगड़ना न चाहिए और किसी के सामने दीनता न दिखानी चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कवि के लिए क्षेमेंद्र ने इस तरह की शत शिक्षायें दी हैं, पर उनमें से हमने यहाँ कुछ ही का उल्लेख किया है, सब का नहीं। इन शिक्षाओं या उपदेशों पर विचार करने से पाठकों को मालूम होगा कि कवि-कर्म कितना कठिन है। विधाता की सारी सृष्टि का ज्ञान कवि को होना चाहिए––लोक में जो कुछ है सबसे उसे अभिज्ञता प्राप्त करनी चाहिए। प्राकृतिक दृश्यों को खुद देखना और प्राणियों के स्वभाव से भी उसे परिचित होना चाहिए। ये सब बातें इस समय कौन करता है? फिर कहिए, कोई कवि कैसे हो सकता है? पिङ्गल पढ़ लेने और काव्य-भास्कर या काव्य-कल्पलता देखे जाने से यदि कोई कवि हो सकता तो आज कल कवि गली-गली मारे-मारे फिरते। तुकबंदी करना और चीज़ है, कविता करना और चीज़।

## चमत्कारोत्पादन

शिक्षित कवि को उक्तियों में चमत्कार का होना परमावश्यक है। यदि कविता में चमत्कार नहीं––कोई विलक्षणता नहीं––तो उससे आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती। क्षेमेंद्र की राय है––

"न हि चमत्कारविरहितस्य कवेः कवित्वं
काव्यस्य वा काव्यत्वम्"।

यदि कवि में चमत्कार पैदा करने की शक्ति नहीं तो वह कवि नहीं। और यदि चमत्कार-पूर्ण नहीं तो काव्य का काव्यत्व भी नहीं। अर्थात जिस गद्य या पद्य में चमत्कार नहीं वह काव्य या कविता की सीमा के भीतर नहीं आ सकता––

एकेन केनचिदनर्घमणिप्रभेण
काव्यं चमत्कृतिपदेन विना सुवर्णम्।
निर्दोषलेशमपि रोहति कस्य चित्ते
लावण्यहीनमिव यौवनमङ्गनानाम्॥

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



काव्य चाहे कैसा ही निर्दोष क्यों न हो; उसके सुवर्ण चाहे कैसे ही मनोहर क्यों न हों—यदि उसमें अनमोल रत्न के समान कोई चमत्कार-पूर्ण पद न हुआ तो वह, स्त्रियों के लावण्य-हीन यौवन के समान, चित्त पर नहीं चढ़ता।

कविता में चमत्कार लाना लाख पिंगल पढ़ने और रस, ध्वनि तथा अलङ्कारादि के निरूपक ग्रंथों के पारायण से सम्भव नहीं। उसके लिए प्रतिभा, साधन, अभ्यास, अवलोकन और मनन की जरूरत होती है। पिंगल आदि का पढ़ना एक बहुत ही गौण बात है।

एक विरहिणी अशोक को देख कर कहती है—तुम खूब फूल रहे हो; लताएँ तुम पर बेतरह छाई हुई हैं; कलियों के गुच्छे सब कहीं लटक रहे हैं, भ्रमर के समूह जहाँ-तहाँ गुञ्जार कर रहे हैं। परंतु मुझे तुम्हारा यह आडम्बर पसन्द नहीं। इसे हटाओ। मेरा प्रियतम मेरे पास नही। अतएव मेरे प्राण कण्ठगत हो रहे हैं।

इस उक्ति में कोई विशेषता नही—इसमें कोई चमत्कार नहीं अतएव इसे काव्य की पदवी नहीं मिल सकती। अब एक चमत्कार पूर्ण उक्ति सुनिए। कोई वियोगी रक्ताशोक को देख कर कहता है—नवीन पत्तों से तुम रक्त (लाल) हो रहे हो; प्रियतमा के प्रशंसनीय गुणों से मैं भी रक्त (अनुरक्त) हूँ। तुम पर शिली-मुख (भ्रमर) आ रहे हैं; मेरे ऊपर भी मनसिज के धनुष से छूटे हुए शिलीमुख (बाण) आ रहे हैं। कान्ता के चरणों का स्पर्श तुम्हारे आनन्द को बढ़ाता है; उसके स्पर्श से मुझे भी परमानंद होता है। अतएव हमारी तुम्हारी दोनों की अवस्था में पूरी-पूरी समता है। भेद यदि कुछ है तो इतना ही कि तुम अशोक हो और मैं सशोक। इस उक्ति में सशोक शब्द रखने से विशेष चमत्कार आ गया। उसने 'अनमोल रत्न' का काम किया। यह

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



चमत्कार किसी पिङ्गल-पाठ का प्रसाद नहीं और न किसी काव्याङ्ग विवेचन ग्रंथ के नियम-परिपालन ही का फल है।

उस दिन हम एक महायात्रा में कुछ लोगों के साथ गङ्गा तट तक गये थे। यात्री की मृत्यु पञ्चक में हुई थी। शव चिता पर रक्खा गया। अग्नि-संस्कार के समय एक लकड़ी खिसकी इससे शव का सिर हिल गया। इस पर एक आदमी बोला—लकड़ी खिसकने से सिर हिल गया। यह सुनकर दूसरा बोल उठा—नहीं, नहीं, अमुक चाचा सिर हिलाकर मना कर रहे हैं कि अग्नि-संस्कार न करो; हम घनिष्ठा-पञ्चक में मरे हैं। यह उक्ति यद्यपि एक ग्रामीण की है तथापि इसमें चमत्कार है। कवि को ऐसे ही चमत्कार लाने का उद्योग करना चाहिये।

क्षेमेन्द्र ने दस प्रकार के चमत्कार बतलाये हैं और सब के उदाहरण भी दिये हैं। पर प्रबन्ध बढ़ जाने के भय से हम उनका निदर्शन नहीं करते।

## गुण-दोष ज्ञान

काव्य के पाँच प्रकार हैं—सगुण, निर्गुण, सदोष, निर्दोष और गुण-दोष-मिश्रित। गुण तीन प्रकार के हैं—शब्द वैमल्य, अर्थवैमल्य और रसवैमल्य। दोष भी तीन प्रकार के—शब्दकालुष्य, अर्थकालुष्य, रसकालुष्य। इन सबके लक्षण इनके नाम ही से व्यक्त हैं। इसलिए उदाहरण नहीं दिये जाते।

"कालीदास की निरंकुशता" नाम के लेख में शब्द, अर्थ और रस-कालुष्य के कई उदाहरण दिये गये हैं। काव्य के गुण-दोष के सम्बन्ध में और भी कितनी ही बातों का विचार उस लेख में किया गया है। उसे देखने से पाठकों को क्षेमेन्द्र का अभिप्राय समझने में बहुत कुछ सहायता मिल सकती है। कवि के निर्दिष्ट दोषों से बचने का यत्न करना चाहिए। परंतु बचेगा उनसे वही, जो उन्हें

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जानता होगा। अतएव कविता-विषयक गुण दोषों का ज्ञान प्राप्त करना भी कवि के लिए आवश्यक है।

## परिचय-चारुता

कवि को सब शास्त्रों, सब विद्याओं और सब कलाओं आदि से परिचित होना चाहिए। क्षेमेन्द्र की आज्ञा है कि तर्क, व्याकरण, नाट्य-शास्त्र, काम-शास्त्र राजनीति, महाभारत, रामायण, वेद-पुराण, आत्मज्ञान, धातुवाद, रत्न-परीक्षा, वैदिक, ज्योतिष, धनुर्वेद, गज-तुरङ्ग, पुरुष-परीक्षा, इन्द्रजाल आदि सब विषयों का ज्ञान कवि को सम्पादन करना चाहिए। कवियों को पद-पद पर और इनसे काम पड़ता है। जो इनसे परिचय नहीं रखता वह बहुश्रुत नहीं हो सकता और विद्वानों की सभा में उसे आदर नहीं मिल सकता। प्राचीन कवियों को देखने से यह साफ़ मालूम होता है कि वे लोग अनेक शास्त्रों के तत्त्व से अभिज्ञ थे। इसका परिचय उन्होंने जगह-जगह पर दिया है।

क्षेमेंद्र जब यह सब बातें लिख चुके तब उन्हें शायद सन्देह हुआ कि उनके कथन को कोई असत्य या अतिशयोक्ति-पूर्ण न समझे। अतएव उन्होंने पुस्तकान्त में लिखा है--

कृत्वा निश्चलदैवपौरुषमयोपायं प्रसूत्यै गिरां
क्षेमेन्द्रेण यदर्जितं शुभफलं तेनास्तु काव्यार्थिनाम्।
निर्विघ्नप्रतिभा प्रभावशुभगा वाणी प्रमाणीकृता।
सद्भिर्वाग्भवमन्त्रपूतवितत श्रोतामृतस्यन्दिनी॥

अर्थात् वाणी की उत्पत्ति के लिए मैंने दैव और पौरुषमय दोनों उपायों को किया है और उनसे शुभ-फल की प्राप्ति भी मुझे हुई है। मेरी अब यह कामना है कि उस फल की प्रेरणा या प्रसाद से कवि होने की इच्छा रखने वालों को भी पवित्र कविता करना आ जाय। भगवान् करे, क्षेमेंद्र की शुभकामना हमारे वर्तमान कवियों के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



विषय में भी फलवती हो। उनसे हमारी एक विनीत प्रार्थना है। वह यह कि यदि वे इस महाकवि के लिखे हुए कण्ठाभरण को कण्ठ में न धारण करें तो उसे फेंक भी न दें और यदि यह कुछ उनसे न कह सके तो यह निबन्ध लिखकर हमने जो अपराध किया है उसे उदारतापूर्वक क्षमा ही कर दें।

---

## ३—कवि और कविता

इस पुस्तक के आरम्भ में "कवि कर्तव्य" नाम का एक लेख आ चुका है। उसमें यह दिखलाया गया है कि कविता को सरस मनोरञ्जक और हृदय-ग्राहिणी बनाने के लिए कवि को किन-किन बातों का ख्याल रखना चाहिए। क्योंकि अच्छी कविता लिखना सबका काम नहीं पर इस बात का विचार आज-कल के कितने ही पद्य-रचना कर्त्ता बहुत कम करते हैं। उन्होंने कविता लिखना बहुत सहल काम समझ लिया है। वे शायद तुली हुई पंक्तियों को ही कवित समझते हैं। यह भ्रम है। कविता एक चीज है, तुली हुई शब्द-स्थापना दूसरी चीज।

उर्दू का साहित्य-समूह हिन्दी से बढ़ा-चढ़ा है। इस बात को कबूल करना ही चाहिए। हिंदी के हितैषियों को उचित है कि हिंदी-साहित्य को उन्नत करके उसकी लाज रक्खें। उर्दू में इस समय अनेक विषयों के कितने ही ऐसे-ऐसे ग्रंथ विद्यमान हैं, जिनका नाम तक हिन्दी में नहीं। उर्दू-लेखकों में शम्स-उल-उलमा हाली, आजाद जकाउल्ला, नज़ीर अहमद आदि की बराबरी करने वाला हिन्दी में शायद ही कोई हो। इन साहित्य-सेवियों ने उर्दू के ज्ञानागार को खूब समृद्धशाली कर दिया है। हिन्दी वालों को चाहिए कि वे इन लोगों की पुस्तकें पढ़ें और वैसी ही पुस्तकें हिन्दी में लिखने को कोशिश करें। इनमें से आज हमें हाली के विषय में कुछ कहना है।

३

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



शम्स-उल-उलमा मौलाना अल्ताफहुसैन हाली उर्दू के बहुत बड़े कवि हैं। आपने उर्दू में नई तरह की कविता की नींव डाली है। आपकी "मुसद्दस" नाम की कविता गजब की है। जिन्होंने इसे न पढ़ा हो जरूर पढ़ें। आप देहली के पास, पानीपत के रहने वाले हैं। देहली के प्रसिद्ध कवि असदुल्लाखाँ (ग़ालिब) की कृपा से आपने कविता सीखी। पहले आप लाहौर में मुलाजिम थे। वहाँ से देहली आये। अब आप शायद पानीपत में मकान ही पर रहते हैं*। बूढ़े हो गये हैं। आपने कई अच्छी-अच्छी पुस्तकें लिखी हैं। कविता में आपका बड़ा नाम है। आपने "मुकद्दमा" नाम का एक लेख लिखा है। यह लेख आपके "दीवान" के साथ छपा है। इस लेख में आपने कवि और कविता पर अपने विचार बड़ी योग्यता से प्रकट किये हैं। प्रायः उसी के आधार पर हम ये लेख लिखते हैं।

यह बात सिद्ध समझी गयी है कि अच्छी कविता अभ्यास से नहीं आती। जिसमें कविता करने का स्वभाविक माद्दा होता है, वही कविता कर सकता है। देखा गया है कि जिस विषय पर बड़े-बड़े विद्वान् अच्छी कविता नहीं कर सकते उसी पर अपढ़ और कम उम्र लड़के कभी-कभी अच्छी कविता लिख देते हैं इससे यह स्पष्ट है कि किसी-किसी में कविता लिखने की इस्तेदाद स्वाभाविक होती है, ईश्वरदत्त होती है। जो चीज ईश्वरदत्त है वह अवश्य लाभदायक होगी। वह निरर्थक नहीं हो सकती। उससे समाज को कुछ-न-कुछ लाभ अवश्य पहुँचता है। अतएव यदि कोई यह समझता हो कि कविता करना व्यर्थ है तो यह उसकी भूल है। हाँ कविता के लक्षणों से च्युत तुले हुए वर्णों या मात्राओं की पद्य नामक पंक्तियाँ व्यर्थ हो सकती हैं। आजकल प्रायः ऐसी ही

* खेद है आपका देहान्त हो गया। १६१६।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



पद्य-मालिकाओं का प्राचुर्य्य है। इससे यदि कविता को कोई व्यर्थ समझे तो आश्चर्य नहीं।

कविता यदि यथार्थ में कविता है तो सम्भव नहीं कि उसे सुनकर सुनने वाले पर कुछ असर न हो। कविता से दुनियाँ में आज तक बहुत बड़े-बड़े काम हुए हैं। इस बात के प्रमाण मौजूद हैं। अच्छी कविता सुनकर कविता-गत रस के अनुसार दुःख, शोक, क्रोध, करुणा और जोश आदि भाव पैदा हुये बिना नहीं रहते। जैसा भाव मन में पैदा होता है, कार्य के रूप में फल भी वैसा ही होता है। हम लोगों में, पुराने जमाने में, भाट, चारण आदि अपनी-अपनी कविता ही की बदौलत वीरों में वीरता का संचार कर देते थे। पुराणादि में कारुणिक प्रसंगों का वर्णन सुनने और उत्तर रामचरित्र आदि दृश्य-काव्यों का अभिनय देखने से जो अश्रुपात होने लगता है वह क्या है? वह अच्छी कविता ही का प्रभाव है। पुराने जमाने में ग्रीस के एथेन्सनगर वाले मेगारा वालों से वैरभाव रखते थे। एक टापू के लिये उनमें कई दफे लड़ाइयाँ हुईं। पर हरबार एथेन्स वालों ही की हार हुई। इस पर सोलन नाम के विद्वान् को बड़ा दुःख हुआ। उसने एक कविता लिखी। उसे उसने एक ऊँची जगह पर चढ़कर एथेन्स वालों को सुनाया। कविता का भावार्थ यह था।

"मैं एथेन्स में न पैदा होता तो अच्छा था। मैं किसी और देश में क्यों न पैदा हुआ? मुझे ऐसे देश में पैदा होना था जहाँ के निवासी मेरे देशवासियों से अधिक वीर, अधिक कठोर-हृदय और उनकी विद्या से बिलकुल बेखबर हों। मैं अपनी वर्तमान अवस्था की अपेक्षा उस अवस्था में अधिक सन्तुष्ट होता। यदि मैं किसी ऐसे देश में पैदा होता तो लोग मुझे देखकर यह तो न कहते कि यह आदमी उसी एथेन्स का रहने वाला है, जहाँ वाले मेगारा के निवासियों से लड़ाई में हार गये और लड़ाई के मैदान

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



से भाग निकले। प्यारे देशबन्धु, अपने शत्रुओं से जल्द इसका बदला लो। अपने इस कलंक को फौरन धो डालो। अपने लज्जाजनक पराजय के अपयश को दूर कर दो। जब तक अपने अन्यायी शत्रुओं के हाथ से अपना छिना हुआ देश न छुड़ा लो तबतक एक मिनट भी चैन से न बैठो।" लोगों के दिल पर इस कविता का इतना असर हुआ कि फौरन मेगारा वालों पर फिर चढ़ाई कर दी गई और जिस टापू के लिए यह बखेड़ा हुआ था उसे एथेन्स वालों ने लेकर चैन ली। इस चढ़ाई में सालन ही सेनापति बनाया गया था।

रोम, इंग्लैंड, अरब, फारस आदि देशों में इस बात के सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं कि कवियों ने असम्भव बातें सम्भव कर दिखाई हैं। जहाँ पस्तहिम्मती का दौर-दौरा था, वहाँ जोश पैदा कर दिया है। जहाँ शान्ति थी, वहाँ गदर मचा दिया है। अतएव कविता एक असाधारण चीज है। परन्तु बिरले ही को सत्कवि होने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

जबतक ज्ञान-वृद्धि नहीं होती—जब तक सभ्यता का जमाना नहीं आता——तभी तक कविता की विशेष उन्नति होती है। क्योंकि सभ्यता और कविता में परस्पर विरोध है। सभ्यता और विद्या की वृद्धि होने से कविता का असर कम हो जाता है। कविता में कुछ न कुछ झूठ का अंश जरूर रहता है। असभ्य अथवा अर्द्धसभ्य लोगों को यह अंश कम खटकता है, शिक्षित और सभ्य लोगों को बहुत। तुलसीदास की रामायण के खास-खास स्थलों का जितना प्रभाव स्त्रियों पर पड़ता है उतना पढ़े लिखे आदमियों पर नहीं। पुराने काव्यों को पढ़ने से लोगों का चित्त जितना पहले आकृष्ट होता था उतना अब नहीं होता। हजारों वर्ष से कविता का क्रम जारी है। जिन प्राकृतिक बातों का वर्णन कवि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



करते हैं उनका वर्णन बहुत कुछ अब तक हो चुका। जो नये कवि होते हैं वे भी उलट फेर से प्रायः उन्हीं बातों का वर्णन करते हैं। इसी से अब कविता कम हृदय-ग्राहिणी होती है।

संसार में जो बात जैसी देख पड़े कवि को उसे वैसा ही वर्णन करना चाहिये। उसके लिये किसी तरह की रोक या पाबन्दी का होना अच्छा नहीं। दबाव से कवि का जोश दब जाता है उसके मन में जो भाव आप ही आप पैदा होते हैं उन्हें जब वह निडर होकर अपनी कविता में प्रकट करता है तभी उसका असर लोगों पर पूरा-पूरा पड़ता है। बनावट से कविता बिगड़ जाती है। किसी राजा या किसी व्यक्ति-विशेष के गुण दोषों को देखकर कवि के मन में जो भाव उद्भूत हों उन्हें यदि वह बेरोक टोक प्रकट कर दे तो उसकी कविता हृदयद्रावक हुए बिना न रहे। परन्तु परतन्त्रता या पुरस्कार-प्राप्ति या और किसी कारण से सच बात कहने में किसी तरह की रुकावट पैदा हो जाने से यदि उसे अपने मन की बात कहने का साहस नहीं होता तो कविता का रस जरूर कम हो जाता है। इस दशा में अच्छे कवियों की भी कविता नीरस अतएव प्रभावहीन हो जाती है। सामाजिक और राजनैतिक विषयों में कटु होने के कारण, सच कहना भी जहाँ मना है, वहाँ इन विषयों पर कविता करने वाले कवियों की उक्तियों का प्रभाव क्षीण हुए बिना नहीं रहता। कवि के लिये कोई रोक नहीं होनी चाहिये अथवा जिस विषय में रोक हो उस विषय पर कविता ही न लिखनी चाहिये। नदी, तालाब, वन, पर्वत, फूल, पत्ती, गरमी सरदी आदि ही के वर्णन से उसे संतोष करना उचित है।

खुशामद के ज़माने में कविता की बुरी हालत होती है। जो कवि राजाओं, नवाबों या बादशाहों के आश्रय में रहते हैं, अथवा उनके खुश करने के इरादे से कविता करते हैं, उनको खुशामद करनी पड़ती है। वे अपने आश्रय-दाताओं की इतनी प्रशंसा करते

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



हैं, इतनी स्तुति करते हैं कि उनकी उक्तियाँ असलियत से बहुत दूर जा पड़ती हैं। इससे कविता को बहुत हानि पहुँचती है। विशेष करके शिक्षित और सभ्य देशों में कवि का काम, प्रभावोत्पादक रीति से, यथार्थ घटनाओं का वर्णन करना है, आकाश-कुसुमों के गुलदस्ते तैयार करना नहीं। अलंकार-शास्त्र के आचार्यों ने अतिशयोक्ति एक अलङ्कार जरूर माना है। परन्तु अभावोक्तियाँ भी क्या कोई अलंकार हैं? किसी कवि की बेसिर-पैर की बातें सुनकर किस समझदार आदमी को आनन्द प्राप्त हो सकता है? जिस समाज के लोग अपनी झूठी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होते हैं वह समाज कभी प्रशंसनीय नहीं समझा जाता। काबुल के अमीर हबीबुल्लाखाँ ने अपनी कविता-बद्ध निराधार प्रशंसा सुनने से, अभी कुछ दिन हुए, इनकार कर दिया। खुशामद-पसन्द आदमी कभी आदर की दृष्टि से नहीं देखे जाते।

कारण-वश अमीरों की झूठी प्रशंसा करने अथवा किसी एक ही विषय का कविता में कवि-समुदाय के आमरण लगे रहने से कविता की सीमा कट-छँटकर बहुत थोड़ी रह जाती है। इस तरह की कविता उर्दू में बहुत अधिक है। यदि यह कहें कि आशिकाना ( शृङ्गारिक ) कविता के सिवा और तरह की कविता उर्दू में है ही नहीं, तो बहुत बड़ी अत्युक्ति न होगी। किसी दीवान को उठाइये, किसी मसनवी को उठाइये, आशिक-माशूकों के रंगीन रहस्यों से आप उसे आरम्भ से अन्त तक रंगी हुई पाइयेगा। इश्क भी यदि सच्चा हो तो कविता में कुछ असलियत आ सकती है। पर क्या कोई कह सकता है कि आशिकाना शेर कहनेवालों का सारा रोना, कहरना, ठंढी साँसें लेना, जीते ही अपनी कब्रों पर चिराग़ जलाना; सब सच है? सब न सही उनके प्रलापों का क्या थोड़ा-सा भी अंश सच है? फिर इस तरह की कविता सैकड़ों वर्षों से होती आ रही है। अनेक कवि हो चुके, जिन्होंने इस विषय पर न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



मालूम क्या-क्या लिख डाला है। इस दशा में नये कवि अपनी कविता में नयापन कैसे ला सकते हैं? वहीं तुक, वही छन्द, वही शब्द, वही उपमा, वही रूपक! इस पर भी लोग पुरानी लकीर को बराबर पीटते जाते हैं। कवित्त, सवैए, घनाक्षरी, दोहे, सोरठे लिखने से बाज नहीं आते। नख-शिख नायिका-भेद, अलङ्कार शास्त्र पर पुस्तकों पर पुस्तकें लिखते चले जाते हैं। अपनी व्यर्थ बनावटी बातों से देवी देवताओं तक को बदनाम करने से नहीं सकुचाते। फल इसका यह हुआ कि कविता की असलियत काफूर हो गयी है। उसे सुनकर सुनने वाले के चित्त पर कुछ भी असर नहीं होता, उलटा कभी मन में घृणा का उद्रेक अवश्य उत्पन्न हो जाता है।

कविता के बिगड़ने और उसकी सीमा परिमित हो जाने से साहित्य पर भारी आघात होता है। वह बरबाद हो जाता है। भाषा में दोष आ जाता है। जब कविता की प्रणाली बिगड़ जाती है, तब उसका असर सारे ग्रन्थकारों पर पड़ता है, यही क्यों, सर्वसाधारण की बोल-चाल तक में कविता के दोष आ जाते हैं। जिन शब्दों, जिन भावों, जिन उक्तियों का प्रयोग कवि करते हैं। उन्हीं का प्रयोग और लोग भी करने लगते हैं। भाषा और बोल-चाल के सम्बन्ध में कवि ही प्रमाण माने जाते हैं। कवियों ही के प्रयुक्त शब्दों और मुहावरों को कोषकार अपने कोषों में रखते हैं। मतलब यह है कि भाषा और बोल-चाल का बनाना या बिगाड़ना प्रायः कवियों ही के हाथ में रहता है। जिस भाषा के कवि अपनी कविता में बुरे शब्द और बुरे भाव भरते रहते हैं, उस भाषा की उन्नति तो होती नहीं, उलटी अवनति होती जाती है।

कविता-प्रणाली के बिगड़ जाने पर यदि कोई नई तरह की स्वाभाविक कविता करने लगता है तो लोग उसकी निन्दा करते हैं कुछ नासमझ और नादान आदमी कहते हैं, यह बड़ी भद्दी कविता

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



है। कुछ कहते हैं, यह कविता ही नहीं। कुछ कहते हैं कि यह कविता तो "छन्दोदिवाकर" में दिये गये लक्षणों से च्युत है; अतएव यह निर्दोष नहीं। बात यह है कि जिसे अबतक कविता कहते आये हैं, वही उनकी समझ में कविता है और सब कोरी काँव काँव! इसी तरह की नुकताचीनी से तङ्ग आकर अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ ने अपनी कविता को सम्बोधन करके उसको सान्त्वना दी है। वह कहता है—"कविते! यह बेक़दरी का ज़माना है। लोगों के चित्त को तेरी तरफ खींचना तो दूर रहा, उलटी सब कहीं तेरी निन्दा होती है। तेरी बदौलत सभा-समाजों और जलसों में मुझे लज्जित होना पड़ता है, पर जब मैं अकेला होता हूँ तब तुझ पर मैं घमण्ड करता हूँ। याद रख, तेरी उत्पत्ति स्वाभाविक है। जो लोग अपने प्राकृतिक बल पर भरोसा रखते हैं वे निर्धन होकर भी आनन्द से रह सकते हैं। पर अप्राकृतिक बल, पर किया गया गर्व कुछ दिन बाद ज़रूर चूर्ण हो जाता है।"

गोल्डस्मिथ ने इस विषय में बहुत कुछ कहा है; पर हमने उसके कथन का सारांश बहुत ही थोड़े शब्दों में दे दिया है। इससे प्रकट है कि नई कविता-प्रणाली पर भृकुटी टेढ़ी करने वाले कवि-प्रकाण्डों के कहने की कुछ भी परवाह न करके अपने स्वीकृत पथ से जरा भी इधर-उधर होना उचित नहीं समझते। नई बातों से घबराना और उनके पक्षपातियों की निन्दा करना मनुष्य का स्वभाव ही सा हो गया है। अतएव नई भाषा और नई कविता पर यदि कोई नुकताचीनी करे तो आश्चर्य नहीं।

आज़कल लोगों ने कविता और पद्य को एक ही चीज समझ रक्खा है। यह भ्रम है। कविता और पद्य में वही भेद है, जो अँग्रेजी की पोयट्री (Poetry) और वर्स (Verse) में है। किसी प्रभावोत्पादक और मनोरञ्जक लेख, बात या वक्तृता का नाम कविता है, नियमानुसार तुली हुई सतरों का नाम पद्य है।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जिस पद्य के पढ़ने या सुनने से चित्त पर असर नहीं होता, वह कविता नहीं। वह नपी तुली शब्द-स्थापना मात्रा है। गद्य और पद्य दोनों में कविता हो सकती है। तुकबन्दी और अनुप्रास कविता के लिये अपरिहार्य्य नहीं। संस्कृत का प्रायः सारा पद्य-समूह बिना तुकबन्दी का है और संस्कृत से बढ़कर कविता शायद ही किसी और भाषा में हो। अरब में भी सैकड़ों अच्छे-अच्छे कवि हो गये हैं। वहां भी शुरू-शुरू में तुकबन्दी का बिलकुल ख्याल न था। अँग्रेजी में भी अनुप्रासहीन बेतुकी कविता होती है। हाँ, एक जरूरी बात है कि वजन और काफिये से कविता अधिक चित्ताकर्षक हो जाती है। पर कविता के लिये ये बातें ऐसी ही हैं जैसे शरीर के लिये वस्त्राभरण। यदि कविता का प्रधान धर्म मनोरञ्जकता और प्रभावोत्पादकता उसमें न हो तो इनका होना निष्फल समझना चाहिए। पद्य के लिये काफिये वग़ैरह की जरूरत है, कविता के लिए नहीं। कविता के लिये तो ये बातें एक प्रकार से उलटी हानिकारक हैं। तुले हुए शब्दों में कविता करने और तुक, अनुप्रास आदि ढूँढने से कवियों के विचार-स्वातन्त्र्य में बड़ी वाधा आती है। पद्य के नियम कवि के लिये एक प्रकार की बेड़ियाँ हैं। उनसे जकड़ जाने से कवियों को अपने स्वाभाविक उड़ान में कठिनाइयों का सामना करन पड़ता है। कवि का काम है कि वह अपने मनोभावों को वाधीनता पूर्वक प्रकट करे। पर काफिया और वजन उसकी स्वाधीनता म विघ्न डालते हैं। वे उसे अपने भावों को स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं प्रकट होने देते। काफिये और वजन को पहले ढूँढकर कवि को अपने मनोभाव तदनुकूल गढ़ने पड़ते हैं। इसका मतबल यह हुआ कि प्रधान बात अप्रधानता को प्राप्त हो जाती है और एक बहुत ही गौण बात प्रधानता के आसन पर जा बैठती है। इससे कवि अपने भाव स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं प्रकट कर सकता। फल

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



है। कुछ कहते हैं, यह कविता ही नहीं। कुछ कहते हैं कि यह कविता तो "छन्दोदिवाकर" में दिये गये लक्षणों से च्युत है; अतएव यह निर्दोष नहीं। बात यह है कि जिसे अबतक कविता कहते आये हैं, वही उनकी समझ में कविता है और सब कोरी काँव काँव! इसी तरह की नुकताचीनी से तङ्ग आकर अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ ने अपनी कविता को सम्बोधन करके उसको सान्त्वना दी है। वह कहता है—"कविते! यह बेकदरी का ज़माना है। लोगों के चित्त को तेरी तरफ खींचना तो दूर रहा, उलटी सब कहीं तेरी निन्दा होती है। तेरी बदौलत सभा-समाजों और जलसों में मुझे लज्जित होना पड़ता है, पर जब मैं अकेला होता हूँ तब तुझ पर मैं घमण्ड करता हूँ। याद रख, तेरी उत्पत्ति स्वाभाविक है। जो लोग अपने प्राकृतिक बल पर भरोसा रखते हैं वे निर्धन होकर भी आनन्द से रह सकते हैं। पर अप्राकृतिक बल, पर किया गया गर्व कुछ दिन बाद ज़रूर चूर्ण हो जाता है।"

गोल्डस्मिथ ने इस विषय में बहुत कुछ कहा है; पर हमने उसके कथन का सारांश बहुत ही थोड़े शब्दों में दे दिया है। इससे प्रकट है कि नई कविता-प्रणाली पर भृकुटी टेढ़ी करने वाले कवि-प्रकाण्डों के कहने की कुछ भी परवाह न करके अपने स्वीकृत पथ से जरा भी इधर-उधर होना उचित नहीं समझते। नई बातों से घबराना और उनके पक्षपातियों की निन्दा करना मनुष्य का स्वभाव ही सा हो गया है। अतएव नई भाषा और नई कविता पर यदि कोई नुकताचीनी करे तो आश्चर्य नहीं।

आज़कल लोगों ने कविता और पद्य को एक ही चीज समझ रक्खा है। यह भ्रम है। कविता और पद्य में वही भेद है, जो अँग्रेजी की पोयट्री (Poetry) और वर्स (Verse) में है। किसी प्रभावोत्पादक और मनोरञ्जक लेख, बात या वक्तृता का नाम कविता है, नियमानुसार तुली हुई सतरों का नाम पद्य है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जिस पद्य के पढ़ने या सुनने से चित्त पर असर नहीं होता, वह कविता नहीं। वह नपी तुली शब्द-स्थापना मात्रा है। गद्य और पद्य दोनों में कविता हो सकती है। तुकबन्दी और अनुप्रास कविता के लिये अपरिहार्य्य नहीं। संस्कृत का प्रायः सारा पद्य-समूह बिना तुकबन्दी का है और संस्कृत से बढ़कर कविता शायद ही किसी और भाषा में हो। अरब में भी सैकड़ों अच्छे-अच्छे कवि हो गये हैं। वहां भी शुरू-शुरू में तुकबन्दी का बिलकुल ख्याल न था। अँग्रेजी में भी अनुप्रासहीन बेतुकी कविता होती है। हाँ, एक जरूरी बात है कि वजन और काफिये से कविता अधिक चित्ताकर्षक हो जाती है। पर कविता के लिये ये बातें ऐसी ही हैं जैसे शरीर के लिये वस्त्राभरण। यदि कविता का प्रधान धर्म मनोरञ्जकता और प्रभावोत्पादकता उसमें न हो तो इनका होना निष्फल समझना चाहिए। पद्य के लिये काफिये वग़ैरह की जरूरत है, कविता के लिए नहीं। कविता के लिये तो ये बातें एक प्रकार से उलटी हानिकारक हैं। तुले हुए शब्दों में कविता करने और तुक, अनुप्रास आदि ढूँढने से कवियों के विचार-स्वातन्त्र्य में बड़ी बाधा आती है। पद्य के नियम कवि के लिये एक प्रकार की बेड़ियाँ हैं। उनसे जकड़ जाने से कवियों को अपने स्वाभाविक उड़ान में कठिनाइयों का सामना करन पड़ता है। कवि का काम है कि वह अपने मनोभावों को वाधीनता पूर्वक प्रकट करे। पर काफिया और वजन उसकी स्वाधीनता म विघ्न डालते हैं। वे उसे अपने भावों को स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं प्रकट होने देते। काफिये और वजन को पहले ढूँढकर कवि को अपने मनोभाव तदनुकूल गढ़ने पड़ते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि प्रधान बात अप्रधानता को प्राप्त हो जाती है और एक बहुत ही गौण बात प्रधानता के आसन पर जा बैठती है। इससे कवि अपने भाव स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं प्रकट कर सकता। फल

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



यह होता है कि कवि की कविता का असर कम हो जाता है। कभी-कभी तो वह बिल्कुल ही जाता रहता है। अब आप ही कहिए कि जो वज़्न और काफ़िया कविता के लक्षण का कोई अंश नहीं उन्हें ही प्रधानता देना भारी भूल है या नहीं ?

जो बात एक असाधारण और निराले ढंग से शब्दों के द्वारा इस तरह प्रकट की जाय कि सुनने वाले पर उसका कुछ न कुछ असर जरूर पड़े, उसी का नाम कविता है। आज-कल हिन्दी में जो सज्जन पद्य-रचना करते हैं और उसे कविता समझ कर छपाने दौड़ते हैं, उनको यह बात जरूर याद रखनी चाहिए। इन पद्य-रचयिताओं में कुछ ऐसे भी हैं जो अपने पद्यों को कालिदास, होमर और बाइरन की कविता से बढ़ कर समझते हैं। यदि कोई सम्पादक उन्हें प्रकाशित करने से इन्कार करता है तो वे अपना अपमान समझते हैं और बेचारे सम्पादक के खिलाफ नाटक, प्रहसन और व्यंग्य-पूर्ण लेख प्रकाशित करके अपने जी की जलन शान्त करते हैं। वे इस बात को बिल्कुल ही भूल जाते हैं कि यदि उनकी पद्य-रचना अच्छी हो तो कौन ऐसा मूर्ख होगा जो उसे अपने पत्र या पुस्तक में सहर्ष और सधन्यवाद न प्रकाशित करेगा ?

कवि का सब से बड़ा गुण नई-नई बातों का सूझना है। उसके लिए कल्पना (Imagination) की बड़ी जरूरत है। जिस में जितनी ही अधिक यह शक्ति होगी वह उतनी ही अधिक अच्छी कविता लिख सकेगा। कविता के लिये उपज चाहिए। नये-नये भावों की उपज जिसके हृदय में नहीं वह कभी अच्छी कविता नहीं लिख सकता। ये बातें प्रतिभा की बदौलत होती हैं। इसी लिए संस्कृत वालों ने प्रतिभा को प्रधानता दी है। प्रतिभा ईश्वर-दत्त होती है। अभ्यास से वह नहीं प्राप्त होती है। इस शक्ति को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कवि माँ के पेट से लेकर पैदा होता है। इसी की बदौलत वह भूत और भविष्यत् को हस्तामलकवत् देखता है। वर्तमान की तो कोई बात ही नहीं। इसी की कृपा से वह सांसारिक बातों को एक अजीब निराले ढंग से बयान करता है, जिसे सुनकर सुनने वाले के हृदयोदधि में नाना प्रकार के सुख, दुःख आश्चर्य आदि विकारों की लहरें उठने लगतीं हैं। कभी-कभी ऐसी अद्भुत बातें कह देते हैं कि जो कवि नहीं हैं उनकी पहुँच वहाँ तक कभी हो नहीं सकती।

कवि का काम है कि वह प्रकृति विकास को खूब ध्यान से देखे। प्रकृति की लीला का कोई ओर-छोर नहीं। वह अनन्त है। प्रकृति अद्भुत खेल खेला करती है। एक छोटे-से फूल में वह अजीब-अजीब कौशल दिखाती है। वे साधारण आदमियों के ध्यान में नहीं आते। वे उनको समझ नहीं सकते। पर कवि अपनी सूक्ष्म दृष्टि से प्रकृति के कौशल अच्छी तरह देख लेता है, उनका वर्णन भी करता है; उनसे नाना प्रकार की शिक्षा भी ग्रहण करता है; और अपनी कविता के द्वारा संसार को लाभ भी पहुँचाता है। जिस कवि में प्राकृतिक दृश्य और प्रकृति के कौशल देखने और समझने का जितना ही अधिक ज्ञान होता है वह उतना ही बड़ा कवि भी होता है।

प्रकृति-पर्य्यालोचना के सिवा कवि को मानव-स्वभाव की आलोचना का भी अभ्यास करना चाहिए। मनुष्य अपने जीवन में अनेक प्रकार के सुख, दुःख आदि का अनुभव करता है। उसकी दशा कभी एक-सी नहीं रहती। अनेक प्रकार के विकार-तरङ्ग उसके मन में उठा ही करते हैं। इन विकारों की जाँच, ज्ञान और अनुभव करना सबका काम नहीं। केवल कवि ही इनके अनुभव करने और कविता द्वारा औरों को इनका अनुभव

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कराने में समर्थ होता है। जिसे कभी पुत्र-शोक नहीं हुआ, उसे उस शोक का यथार्थ ज्ञान होना सम्भव नहीं। पर यदि वह कवि है तो वह पुत्र-शोकाकुल माता या पिता की आत्मा में प्रवेश सा करके उसका अनुभव कर लेता है। उस अनुभव का वह इस तरह वर्णन करता है कि सुनने वाला तन्मनस्क होकर उस दुख से अभिभूत हो जाता है। उसे ऐसा मालूम होने लगता है कि स्वयं उसी पर वह दुख पड़ रहा है। जिस कवि को मनोविकारों और प्राकृतिक बातों का यथेष्ट ज्ञान नहीं वह कदापि अच्छा कवि नहीं हो सकता।

हाली के मुकद्दमे को पढ़कर हमारे एक मित्र महाशय ने कुछ अलङ्कार-शास्त्र के आचार्यों की राय लिखी है और संक्षेपतया यह दिखलाया है कि हमारे आलङ्कारिकों ने कविता के लिए किन-किन बातों की जरूरत समझी है। आपके कथनका आशय हम नीचे देते हैं। पाठक देखेंगे कि हाली की राय संस्कृत-साहित्य के आचार्यों से बहुत कुछ मिलती है। सुनिए—

नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतञ्च बहुनिर्मलम्।
अमन्दश्चाभियोगोऽस्याः कारणं काव्यसम्पदः॥

(आचार्य दण्डी——काव्यादर्श)

अर्थात् स्वाभाविकी प्रतिभा अर्थात् शक्ति (१) शब्द-शास्त्रादि तथा लोकाचारादि का विशुद्ध ज्ञान (२) और प्रगाढ़ अभ्यास (३) यह सब मिलकर काव्य-रूप सम्पत्ति का कारण है--"श्रुत" शब्द के अर्थ पण्डित जीवानन्द विद्यासागर ने ये किये हैं— "श्रुत" शास्त्रज्ञानं लोकाचारादिज्ञानञ्च"। सृष्टि-कार्य और मानव-स्वभाव इन दोनों के ज्ञान का बोध लोकाचारादि ज्ञान है। उसका उल्लेख हाली ने अपनी दूसरी और तीसरी शर्त 'सृष्टिकार्य पर्यालोचना' और शब्दविन्यास चातुर्य, में किया है। प्रगाढ़ अभ्यास

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:


की आवश्यकता हाली ने "आमद और आवुर्द में फर्क"--इस विषय पर बहस करते हुए सिद्ध की हैं।

इसी अभिप्राय का एक श्लोक यह भी है—

शक्तिर्निपुणता लोके शास्त्रकार्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ॥

अर्थात् प्रतिभाशक्ति, काव्यादि शास्त्र तथा लोकाचारादि के अवलोकनसे प्राप्त हुई निपुणता और काव्यों की शिक्षा के अनुसार अभ्यास, ये तीनों बातें कविता के उद्भव में हेतु हैं। कई आचार्यों ने प्रतिभा ही को काव्य का कारण मानकर व्युत्पत्ति को उसकी सुंदरता और अभ्यास को वृद्धि का हेतु माना है। यथा—

कवित्वं जायते शक्तैर्वर्द्धऽभ्यासयोगतः।
तस्य चारुत्वनिष्पत्तौ व्युत्पत्तिस्तु गरीयसी ॥

इस मत की पुष्टि भी हाली के उस लेख से होती है, जो उन्होंने सब से पहली शर्त "तखय्युल" (प्रतिभा) पर लिखा है।

इन्हीं सब बातों को हाली ने अपने मुकद्दमे में, ३७ से ५४ पृष्ठ तक, उदाहरणादिकों से पल्लवित किया है।

सृष्टि-कार्य-निरीक्षण की आवश्यकता कवि को क्यों है ? इस बात का हाली ने 'मसनवी' पर बहस करते हुए, एक उदाहरण द्वारा समझाया है। वे लिखते हैं--

....इसी प्रकार किस्से में ऐसी छोटी-छोटी प्रासङ्गिक बातों का बयान करना, जिन्हें तजरबा और मशाहिदा झुठलाते हों, कदापि उचित नहीं। इससे आख्यायिकार का इतना बेसलीकापन साबित नहीं होता, जितनी उसकी अज्ञता और लोकवृत्तान्त से अनभिज्ञता, या जरूर अनुभव प्राप्त करने से बेपरवाई साबित होती है। जैसा कि "बदरे मुनीर" में एक खास मौके और वक्त का समाँ इस तरह बयान किया है—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कराने में समर्थ होता है। जिसे कभी पुत्र-शोक नहीं हुआ, उसे उस शोक का यथार्थ ज्ञान होना सम्भव नहीं। पर यदि वह कवि है तो वह पुत्र-शोकाकुल माता या पिता की आत्मा में प्रवेश सा करके उसका अनुभव कर लेता है। उस अनुभव का वह इस तरह वर्णन करता है कि सुनने वाला तन्मनस्क होकर उस दुख से अभिभूत हो जाता है। उसे ऐसा मालूम होने लगता है कि स्वयं उसी पर वह दुख पड़ रहा है। जिस कवि को मनोविकारों और प्राकृतिक बातों का यथेष्ट ज्ञान नहीं वह कदापि अच्छा कवि नहीं हो सकता।

हाली के मुकद्दमे को पढ़कर हमारे एक मित्र महाशय ने कुछ अलङ्कार-शास्त्र के आचार्यों की राय लिखी है और संक्षेपतया यह दिखलाया है कि हमारे आलङ्कारिकों ने कविता के लिए किन-किन बातों की जरूरत समझी है। आपके कथनका आशय हम नीचे देते हैं। पाठक देखेंगे कि हाली की राय संस्कृत-साहित्य के आचार्यों से बहुत कुछ मिलती है। सुनिए—

नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतञ्च बहुनिर्मलम्।
अमन्दश्चाभियोगोऽस्याः कारणं काव्यसम्पदः॥

(आचार्य दण्डी—काव्यादर्श)

अर्थात् स्वाभाविकी प्रतिभा अर्थात् शक्ति (१) शब्द-शास्त्रादि तथा लोकाचारादि का विशुद्ध ज्ञान (२) और प्रगाढ़ अभ्यास (३) यह सब मिलकर काव्य-रूप सम्पत्ति का कारण है—"श्रुत" शब्द के अर्थ पण्डित जीवानन्द विद्यासागर ने ये किये हैं—"श्रुत" शास्त्रज्ञानं लोकाचारादिज्ञानञ्च"। सृष्टि-कार्य और मानव-स्वभाव इन दोनों के ज्ञान का बोध लोकाचारादि ज्ञान है। उसका उल्लेख हाली ने अपनी दूसरी और तीसरी शर्त 'सृष्टिकार्य पर्यालोचना' और शब्दविन्यास चातुर्य, में किया है। प्रगाढ़ अभ्यास

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



की आवश्यकता हाली ने "आमद और आवुर्द में फर्क"--इस विषय पर बहस करते हुए सिद्ध की हैं।

इसी अभिप्राय का एक श्लोक यह भी है—

शक्तिर्निपुणता लोके शास्त्रकार्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षायाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ॥

अर्थात् प्रतिभाशक्ति, काव्यादि शास्त्र तथा लोकाचारादि के अवलोकनसे प्राप्त हुई निपुणता और काव्यों की शिक्षा के अनुसार अभ्यास, ये तीनों बातें कविता के उद्भव में हेतु हैं। कई आचार्यों ने प्रतिभा ही को काव्य का कारण मानकर व्युत्पत्ति को उसकी सुंदरता और अभ्यास को वृद्धि का हेतु माना है। यथा—

कवित्वं जायते शक्तैर्वर्द्धऽभ्यासयोगतः।
तस्य चारुत्वनिष्पत्तौ व्युत्पत्तिस्तु गरीयसी ॥

इस मत की पुष्टि भी हाली के उस लेख से होती है, जो उन्होंने सब से पहली शर्त "तखय्युल" (प्रतिभा) पर लिखा है।

इन्हीं सब बातों को हाली ने अपने मुकद्दमे में, ३७ से ५४ पृष्ठ तक, उदाहरणादिकों से पल्लवित किया है।

सृष्टि-कार्य-निरीक्षण की आवश्यकता कवि को क्यों है ? इस बात का हाली ने 'मसनवी' पर बहस करते हुए, एक उदाहरण द्वारा समझाया है। वे लिखते हैं--

....इसी प्रकार किस्से में ऐसी छोटी-छोटी प्रासङ्गिक बातों का बयान करना, जिन्हें तजरबा और मशाहिदा झुठलाते हों, कदापि उचित नहीं। इससे आख्यायिकार का इतना बेसलीकापन साबित नहीं होता, जितनी उसकी अज्ञता और लोकवृत्तान्त से अनभिज्ञता, या जरूर अनुभव प्राप्त करने से बेपरवाई साबित होती है। जैसा कि "बद्रे मुनीर" में एक खास मौके और वक्त का समाँ इस तरह बयान किया है—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



वो गाने का आलम वो हुस्ने बुतां,
वो गुलशन की खूबी वो दिन का समाँ।
दरख्तों की कुछ छाँव और कुछ वो धूप,
वो धानों को सब्जी वो सरसों का रूप ॥

आखिर मिसरे से साफ प्रतीत होता है कि एक तरफ धान खड़े थे और एक तरफ सरसों फूल रही थी। मगर यह बात बाक़े के खिलाफ है, क्योंकि धान खरीफ में होते हैं और सरसों रबी में, गेहुँओं के साथ बोई जाती है।

कवि-कुल-गुरु कालिदास के विश्व-विख्यात काव्य, तथा कविवर बिहारीलाल की सतसई से, इसी विषय का, एक एक प्रत्युदाहरण सुनिये—

इक्षुच्छायनिषादिन्यस्तस्य गोप्तुर्गुणोदयम् ।
अकुमारकथोद्घातं शालिगोप्यो जगुर्यशः ॥

——रघुवंश।

रघु की दिग्वजयार्थ यात्रा के उपोद्घात में शरद ऋतु का वर्णन करते हुए कवि कहता कि ईख की छाया में बैठी हुई धान रखने वाली स्त्रियाँ रघु का यश गाती थीं। शरद्-काल में जब धान के खेत पकते हैं तब वह इतनी-इतनी बड़ी हो जाती है कि उसकी छाया में बैठकर खेत रखा सकें। ईख और धान के खेत भी प्रायः पास ही पास हुआ करते हैं। कवि को ये सब बातें विदित थीं। श्लोक में इस दशा का—इस वास्तविक घटना का—चित्र-सा खींच दिया गया है। श्लोक पढ़ते ही वह समाँ आँखों में फिरने लगता है।

महाराजाधिराज विक्रमादित्य के सखा, राजसी ठाठ से रहने वाले कालिदास, ने ग़रीब किसान की, नगर से दूर, जंगल से सम्बन्ध रखने वाली एक वास्तविक घटना का कैसा मनोहर चित्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



उतारा है। यह उनके प्रकृति-पर्यालोचक होने का दृढ़ प्रमाण है। दूसरा प्रत्युदाहरण——

सन सूक्यौ बत्यौ बीनौ ऊखौ लई उखारि।
हरी-हरी अरहर अजौं घर-घर हर हिय नारि॥

——सतसई

पहले सन सूखता है, फिर बनवाड़ी या कपास के खेत की बहार खतम होती है। पुनः ईख के उखड़ने की बारी आती है। और इन सब से पीछे गेहुओं के साथ तक अरहर हरी-भरी खड़ी रहती है।

वे सब बातें कवि ने कैसे सुंदर और सरल ढंग से क्रम पूर्वक इस दोहे में बयान की हैं। इसमें अनुप्रास की छटा आदि अन्य काव्य-गुणों पर ध्यान दिलाने का यह अवसर नहीं यहाँ तक पूर्वोक्त महाशय की राय हुई।

कविता को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए उचित शब्द-स्थापना की भी बड़ी जरूरत है। किसी मनोविकार का दृश्य के वर्णन में ढूँढ़-ढूँढ़कर ऐसे शब्द रखने चाहिये जो सुनने वाले की आँखों के सामने वर्ण्य-विषय का चित्र-सा खींच दे। मनोभाव चाहे कैसा ही अच्छा क्यों न हो, यदि वह तदनुकूल शब्दों में न प्रकट किया गया तो उसका असर यदि जाता नहीं रहता तो कम जरूर हो जाता है। इसीलिए कवि को चुन-चुन कर ऐसे शब्द रखने चाहिए और इस क्रम से रखने चाहिये; जिससे उसके मन का भाव पूरे तौर पर व्यक्त हो जाय। उसमें कसर न पड़े। मनोभाव शब्दों ही के द्वारा व्यक्त होता है। अतएव युक्ति सङ्गत शब्द-स्थापना के बिना कवि की कविता तादृश हृदय-हारिणी नहीं हो सकती। जो कवि अच्छी शब्द-स्थापना करना नहीं जानता अथवा यों कहिए कि जिसके पास काफी शब्दसमूह नहीं है उसे

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कविता करने का परिश्रम ही न करना चाहिए जो सुकवि हैं उन्हें एक-एक शब्द को योग्यता ज्ञात रहती है। वे खूब जानते हैं कि किस शब्द में क्या प्रभाव है। अतएव जिस शब्द में उनका भाव प्रकट करने की एक बाल भर भी कमी होती है उसका वे कभी प्रयोग नहीं करते। आजकल के पद्य-रचना-कर्त्ता महाशयों को इस बात का बहुत कम ख्याल रहता है। इसी से उनकी कविता, यदि अच्छे भाव से भरी हुई भी हो तो भी, बहुत कम असर पैदा करती है। जो कवि प्रति पंक्ति में निरर्थक 'सु' 'जु' और 'रु' का प्रयोग करता है वह मानो इस बात का खुद ही सार्टिफिकेट दे रहा है कि मेरे अधिकृत शब्द कोश में शब्दों की कमी है। ऐसे कवियों की कविता कदापि सर्व-सम्मत और प्रभावोत्पादक नहीं हो सकती।

अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि मिल्टन ने कविता के तीन गुण वर्णन किये हैं। उनकी राय है कि कविता सादी हो, जोश से भरी हुई हो, और असलियत से गिरी हुई न हो।

सादगी से यह मतलब नहीं कि सिर्फ शब्द-समूह ही सादा हो, किन्तु विचार परम्परा भी सादी हो। भाव और विचार ऐसे सूक्ष्म और छिपे हुए न हों कि उनका मतलब समझ में न आवे या देर से समझ में आवे। यदि कविता में कोई ध्वनि हो तो इतनी दूर न हो, जो उसे समझने में गहरे विचार की जरूरत हो। कविता पढ़ने या सुनने वाले को ऐसी साफ-सुथरी सड़क मिलनी चाहिए जिस पर कंकड़, पत्थर, टीले, खन्दक, काँटे और झाँड़ियों का नाम न हो। वह खूब साफ और हमवार हो, जिससे उस पर चलने वाला आराम से चला जाय। जिस तरह सड़क जरा भी ऊँची नीची होने से बाइसिकिल ( पैरगाड़ी ) के सवार को दचके लगते हैं उसी तरह कविता

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



की सड़क यदि थोड़ी भी नाहमवार हुई तो पढ़ने वाले के हृदय पर धक्का लगे बिना नहीं रहता। कविता-रूपी सड़क के इधर-उधर स्वच्छ पानी के नदी-नाले बहते हों; दोनों तरफ फलों-फूलों से लदे हुए पेड़ हों; जगह-जगह पर विश्राम करने योग्य स्थान बने हों; प्राकृतिक दृश्यों की नयी-नयी झाँकियाँ आँखों को लुभाती हों। दुनियाँ में आज तक जितने अच्छे-अच्छे कवि हुए हैं उनकी कविता ऐसी ही देखी गयी है। अटपटे भाव और अटपटे शब्द-प्रयोग करने वाले कवियों की कभी कद्र नहीं हुई। यदि कभी किसी की कुछ हुई भी है तो थोड़े ही दिनों तक। ऐसे कवि विस्मृति के अन्धकार में ऐसे छिप गए हैं कि इस समय उनका कोई नाम तक नहीं जानता। एक मात्र सूची शब्द-झंकार ही जिन कवियों की करामात है उन्हें चाहिये कि वे एक दम ही बोलना बन्द कर दें।

भाव चाहे कैसा ही ऊँचा क्यों न हो, पेचीदा न होना चाहिए। वह ऐसे शब्दों के द्वारा प्रकट किया जाना चाहिए, जिनसे सब लोग परिचित हों। मतलब यह कि भाषा बोल-चाल की हो, क्योंकि कविता की भाषा बोल-चाल से जितनी ही अधिक दूर जा पड़ती है उतनी ही उसकी सादगी कम हो जाती है। बोल-चाल मे मतलब उस भाषा से है, जिसे खास और आम सब बोलते; विद्वान् और अविद्वान् दोनों जिसे काम में लाते हैं। इसी तरह कवि को मुहाविरे का भी खयाल रखना चाहिए। जो मुहाविरे सर्व सम्मत हैं, उसी का प्रयोग करना चाहिए। हिन्दी और उर्दू में कुछ शब्द अन्य भाषाओं के भी आ गये हैं। वह यदि बोल-चाल के हैं तो उनका प्रयोग सदोष नहीं माना जा सकता। उन्हें त्याज्य नहीं समझना चाहिए। कोई-कोई ऐसे शब्दों को उनके मूल-रूप में लिखना ही सही समझते हैं, पर यह उनकी भूल है। जब अन्य भाषा का कोई शब्द किसी और भाषा में आ जाता है तब वह उसी भाषा का हो जाता है। अतएव उसे उसकी मूल भाषा के रूप में



epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



लिखते जाना भाषा विज्ञान के नियमों के खिलाफ है। खुद 'मुहावरह' शब्द ही को देखिए। जब उसे अनेक लोग हिन्दी में 'मुहाविरा' लिखने और बोलने लगे तब उसका असली रूप जाता रहा। वह हिन्दी का शब्द हो गया। यदि अन्य भाषाओं के बहु-प्रयुक्त शब्दों का मूल रूप ही शुद्ध माना जायगा तो घर, घड़ा, हाथ, पाँव, नाक, कान, गश, मुसलमान, कुरान, मैगजीन, एडमिरल, लालटेन आदि शब्दों को भी उनके पूर्व रूप में ले जाना पड़ेगा। एशियाटिक सोसाइटी के जनवरी १९०७ के जर्नल में फ्रेंच और अँगरेजी आदि यूरोपियन भाषाओं के १३८ शब्द ऐसे दिये गये हैं जो फ़ारस के फ़ारसी अखबारों में प्रयुक्त हैं। इनमें से कितने ही शब्दों क रूपान्तर हो गया है। अब यदि इस तरह के शब्द अपने मूल रूप में लिखे जायंगे तो भाषा में बेतरह गड़बड़ पैदा हो जायगी।

असलियत से मतलब यह नहीं कि कविता एक प्रकार का इतिहास समझा जाय और हर बात में सचाई का ख्याल रक्खा जाय। यह नहीं कि सच्चाई की कसौटी पर कसने पर यदि कुछ भी कसर मालूम हो तो कविता का कवितापन जाता रहे। असलियत से सिर्फ इतना ही मतलब है कि कविता बेबुनियाद न हो उसमें जो उक्ति हो वह मानवी मनोविकारों और प्राकृतिक नियमों के आधार पर कही गई हो। स्वाभाविकता से उसका लगाव न छूटा हो। कवि यदि अपनी या और किसी की तारीफ़ करने लगे और यदि वह उसे सचमुच ही सच समझे अर्थात् यदि उसकी भावना वैसो ही हो, तो वह भी असलियत से खाली नहीं, फिर चाहे और लोग उसे उलटा ही क्यों न समझते हों। परन्तु इन बातों में भी स्वाभाविकता से दूर न जाना चाहिए। क्योंकि स्वाभाविकता अर्थात् 'नेचुरल' (natural) उक्तियाँ ही सुनने वालों के हृदय पर असर कर सकती हैं, अस्वाभाविक नहीं। असलियत को लिए हुए कवि स्वतन्त्रता पूर्वक जो चाहे कह सकता है; असल बात को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



एक नए साँचे में ढालकर कुछ दूर तक इधर-उधर भी उड़ान भर सकता है; पर असलीयत के लगाव को वह नहीं छोड़ता। असलीयत को हाथ से जाने देना मानो कविता को प्रायः निर्जीव कर डालना है। शब्द अर्थ दोनों ही के सम्बन्ध में उसे स्वाभाविकता का अनुधावन करना चाहिए। जिस बात के कहने में लोग स्वाभाविक रीति पर जैसे और जिस क्रम से शब्द-प्रयोग करते हैं वैसे ही कवि को भी करना चाहिए। कविता में उसे कोई बात ऐसी न कहनी चाहिए जो दुनियाँ में न होती हो। जो बातें हमेशा हुआ करती हैं। अथवा जिन बातों का होना सम्भव है, वही स्वाभाविक हैं। अर्थ की स्वाभाविकता से मतलब ऐसी ही बातों से है। हम इन बातों को उदाहरण देकर अधिक स्पष्ट कर देते, पर लेख बढ़ जाने के डर से वैसा नहीं करते।

जोश से यह मतलब है कि कवि जो कुछ कहे इस तरह कहे मानो उसके प्रयुक्त शब्द आप ही आप उसके मुँह से निकल गये हैं। उनसे बनावट न ज़ाहिर हो। यह न मालूम हो कि कवि ने कोशिश करके ये बातें कहीं हैं; किन्तु यह मालूम हो कि उनके हृद्गत भावों ने कविता के रूप में अपने को प्रकट कराने के लिए उसे विवश किया है। जो कवि है उसमें जोश स्वाभाविक होता है। वर्ण्य वस्तु को देख कर किसी अदृश्य-शक्ति की प्रेरणा से, वह उस पर कविता करने के लिए विवश-सा हो जाता है। उसमें एक अलौकिक शक्ति पैदा हो जाती है। इसी शक्ति के बल से वह सजीव ही नहीं, निर्जीव चीज़ों तक का वर्णन ऐसे प्रभावोत्पादक ढंग से करता है कि यदि उन चीजों में बोलने की शक्ति होती तो खुद वे भी इससे अच्छा वर्णन न कर सकतीं। जोश से यह भी मतलब नहीं कि कविता के शब्द खूब ज़ोरदार और जोशीले हों। सम्भव है, शब्द जोरदार न हों; पर जोश उनमें छिपा हुआ हो। धीमे शब्दों में भी ज़ोश रह सकता है। और पढ़ने या सुनने वाले

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



के हृदय पर चोट कर सकता है। परन्तु ऐसे शब्दों का प्रयोग करना ऐसे-वैसे कवि का काम नहीं। जो लोग मोटी छुरी से तेज तलवार का काम लेना चाहते हैं, वही धीमे शब्दों में जोश भर सकते हैं।

सादगी, असलियत और जोश यदि ये तीनों गुण कविता में हों तो कहना ही क्या है, परन्तु बहुधा अच्छी कविता में भी इन में से एक-आधा गुण की कमी पाई जाती है। कभी-कभी देखा जाता है कि कविता में केवल जोश रहता है, सादगी और असलियत नहीं। कभी-कभी सादगी और जोश पाये जाते हैं। असलियत नहीं। परन्तु बिना असलियत के जोश का होना बहुत कठिन है। अतएव कवि को असलियत का सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिए।

अच्छी कविता की सबसे बड़ी परीक्षा यह है कि उसे सुनते ही लोग बोल उठें कि सच कहा। वही कवि सच्चे कवि हैं जिनकी कविता सुन कर लोगों के मुँह से सहसा यह उक्ति निकलती है। ऐसे कवि धन्य हैं; और जिस देश में ऐसे कवि पैदा होते हैं वह देश भी धन्य है। ऐसे कवियों की कविता चिरकाल तक जीवित रहती है।

---

## ४—कविता

बम्बई से मराठी भाषा में, 'बालबोध, नामक एक छोटी-सी मासिक पुस्तक निकलती है। उसकी बाईसवीं जिल्द के पाँचवें अङ्क में कविता-विषयक एक बहुत ही सरल और हृदयङ्गम लेख निकला है। उसका भावार्थ हम यहाँ पर देते हैं।

हँसना, रोना, क्रोध करना और विस्मित होना आदि व्यापार मनुष्यों में आप ही आप उत्पन्न होते हैं। उन व्यापारों के लिये जो सामग्री दरकार होती है उस सामग्री को यथा समय प्राप्त होते

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



ही वे व्यापार आपही आप आविर्भूत हो जाते हैं। इसके लिए और कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता कविता का भी प्रकार ऐसा ही है। अन्तःकरण की वृत्तियों के चित्र का नाम कविता है। नाना प्रकार के विकारों के योग से उत्पन्न हुए मनोभाव जब मन में नहीं समाते तब वे आप ही आप मुख के मार्ग से बाहर निकलने लगते हैं। अर्थात् मनोभाव शब्दों का स्वरूप धारण करते हैं। वही कविता है। चाहे वह पद्यात्मक हो चाहे गद्यात्मक। शब्दात्मक मनोभाव अपनी शक्ति के अनुसार सुनने वाले पर अपना प्रभाव जमाते हैं। कथा, पुराण, अथवा संकीर्तन आदि के समय भक्ति-भाव-पूर्ण पदों को सुनकर कोई-कोई प्रेमी आनन्द से लीन हो जाते हैं। उनकी आखों से आसुओं की धारा बहने लगती है; यहाँ तक कि अपने को भूल जाते हैं। परन्तु वहीं पर उनके पास ही बैठे हुए कोई-कोई महात्मा, निकटस्थ नटखट लड़कों की शरारत देख कर हँसते हैं; किंवा ऊँघा करते हैं। इसका यह कारण है कि उन पदों में भरे हुये भक्तिरस का स्वीकार अथवा उपभोग करने का सामर्थ्य उनमें नहीं होता। वह कोई आश्चर्य की बात नहीं। खून के समान भारी घटनायें जिस जगह हो जाती हैं उस जगह सब समझदार मनुष्य घबरा उठते हैं; परन्तु तीन चार वर्ष के छोटे-छोटे लड़के वहीं आनन्द से खेला करते हैं। उन पर उस घटना का कुछ असर नहीं होता। अज्ञानता के कारण खून के समान भयानक घटनाओं की भयङ्करता का विचार ही जब उन लड़कों के मन में नहीं आता, तब उनको उस विषय में भय कैसे मालूम हो सकता है?

कवियों का यह काम है कि वे जिस पात्र अथवा जिस वस्तु का वर्णन करते हैं उसका रस अपने अन्तःकरण में लेकर उसे ऐसा शब्द-स्वरूप दे देते हैं कि उन शब्दों को सुनने से वह रस सुनने वालों के हृदय में जागृत हो उठता है। ऐसा होना बहुत कठिन है। सच

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



तो यह है कि काव्य रचना में सबसे बड़ी कठिनता जो है वह यही है। रामचन्द्र और सीता को हुए कई युग हुए। तुलसीदास को भी आज कई सौ वर्ष हुए। परन्तु उनके काव्य में किसी-किसी स्थान पर इतना रस भरा हुआ है कि उस रस के प्रवाह में पड़कर बहे बिना सहृदय मनुष्य कदापि नहीं बच सकते। रामचन्द्र के वन-गमन-समय सीता कहती हैं—

प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान।
तुम बिन रघुकुल-कुमुद-विधु सुरपुर नरक-समान॥
मातु पिता भगिनी प्रिय भाई।
प्रिय परिवार सुहृद समुदाई॥
सासु ससुर गुरु सुजन सहाई।
सुठि सुन्दर सुशील सुखदाई॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते।
पिय-बिनु तियहिं तरणि ते ताते॥
तनु धन धाम धरणि पुर राजू।
पति-विहीन सब शोक समाजू॥
भोग रोग सम भूषण भारू।
यम-यातना सरिस संसारू॥
प्राणनाथ तुम बिनु जग माहीं।
मो कहँ सुखद कतहुँ कोउ नाहीं॥
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी।
तैसिय नाथ पुरुष बिनु नारी॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे।
शरद-बिमल-विधु-बदन-निहारे॥
खग मृग परिजन नगर बन, बलकल बसन दुकूल।
नाथ साथ सुर-सदन सम, पर्णशाल सुखमूल॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



वनदेवी वनदेव उदारा ।
करिहैं सासु ससुर सम प्यारा ॥
कुश-किशलय साथरी सुहाई ।
प्रभु संग मञ्जु मनोज तुराई ॥
कन्द मूल फल अमिय अहारू ।
अवध सहस सुख सरिस पहारू ॥
क्षण-क्षण प्रभु-पद-कमल विलोकी ।
रहि हौं मुदित दिवस जिमि कोकी ॥
वन दुख नाथ कहेउ बहुतेरे ।
भय विषाद परिताप घनेरे ।
प्रभु-वियोग लवलेश समाना ।
सब मिलि होहिं न कृपानिधाना ॥
अस जिय जान सुजान-शिरोमनि ।
लेइय संग मोहि छाँड़िय जनि ॥
विनती बहुत करौं का स्वामी ।
करुणामय उर अन्तरयामी ॥
राखिय अवध जो अवधि लगि, रहति जानिए प्रान ।
दीनबन्धु सुन्दर सुखद, शील-सनेह-निधान ॥
मोहिं मग चलत न होइहि हारी ।
क्षण-क्षण चरण-सरोज निहारी ॥
सबहिं भाँति प्रिय-सेवा करिहौं ।
मारग-जनित सकल श्रम हरिहौं ॥
पाँव पखारि बैठि तरु छाहीं ।
करिहौं वायु मुदित मन माहीं ॥
श्रमकण-सहित श्याम तनु देखे ।
कहँ दुख समय प्राणपति पेखे ॥

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



सम महि तृण तरु-पल्लव डासी।
पाँय पलोटिहि सब निशि दासी ॥
बार बार मृदु मूरति जोही।
लागिहि ताति बयारि न मोंही ॥
को प्रभु संग मोहिं चितवनिं हारा।
सिंह बधुहिं जिमि शशक सियारा।
मैं सुकुमारि नाथ वन-योगू।
तुमहिं उचित तप मो कहँ भोगू ॥
ऐसेहु वचन कठोर सुनि, जो न हृदय बिलगान।
तो प्रभु विषम वियोग दुख, सहिहैं पामर प्रान ॥
अस कहि सीय विकल भई भारी।
वचन वियोग न सकी संभारी ॥

यह पढ़ते अथवा सुनते समय सुनने वाले के हृदय में सीता की धर्मनिष्ठा और पतिपरायणता-विषयक भाव थोड़ा-बहुत उद्दीप्त या जाग्रत हुए बिना कभी नहीं रह सकता।

एक और उदाहरण लीजिए। पण्डित श्रीधर पाठक द्वारा अनुवादित "एकान्तवासी योगी" में वियोगिनी पथिक वेशधारिणी अञ्जलेना अपने प्रियतम एडविन से उसी के विषय में इस प्रकार कहती है—

पहुँचा उसे खेद इससे अति, हुआ दुखित अत्यंत उदास,
तज दी अपने मन में उसने, मेरे मिलने की सब आस।
मैं यह दशा देखने पर भी, ऐसी हुई कठोर।
करने लगी अधिक रूखापन, दिन-दिन उसकी ओर ॥
होकर निपट निराश अन्त को, चला गया वह बेचारा;
अपने उस अनुचित घमंड का फल मैंने पाया सारा।
एकाकी में जाकर उसने, तोड़ जगत से नेह;

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



धोकर हाथ प्रीति मेरी से, त्याग दिया निज देह ॥
किन्तु प्रेमनिधि, प्राणनाथ को भूल नहीं मैं जाऊँगी;
प्राण दान के द्वारा उसका ऋण मैं आप चुकाऊँगी।
उस एकान्त ठौर को मैं, अब ढूँढ़ूँ हूँ दिन रैन;
दुख को आग बुझाय जहाँ पर दूँ इस मन को चैन।
जाकर वहाँ जगत को मैं भी, उसी भाँति बिसराऊँगी;
देह गेह को देय तिलाञ्जलि, प्रिय से प्रीति निभाऊँगी।
मेरे लिए एडविन ने ज्यों, किया प्रीति का नेम;
त्योंही मैं भी शीघ्र करूँगी परिचित अपना प्रेम ॥

इसमें अञ्जलेना के पवित्र प्रेम और उसकी भूल के पश्चात्ताप-सम्बन्धी रस को कवि ने अपने हृदय में लेकर शब्दों के द्वारा बाहर बहाया है। वह रस-प्रभाव सुनने वालों के अन्तःकरण में प्रवेश करके उपरति उत्पन्न करता है जिसके कारण हृदय गद्गद् हो उठता है और किसी-किसी के आँसू तक निकलने लगते हैं। इसका नाम कविता-शक्ति है। ऐसी ही उक्तियों को कवित कहते हैं।

एक तत्त्वज्ञानी ने तो यहाँ तक कहा है कि रस-परिपक्वता ही कविता है। उसे मुख से कहने की आवश्यकता नहीं और कागज पर लिखने की आवश्यकता नहीं। यदि नट रङ्गभूमि में उपस्थित होकर, अपना मुँह ऊपर की ओर उठाकर और गर्दन हिलाकर, सभासदों को हँसा दे, तो उसके उस व्यापार को भी कविता कहना होगा। आजकल के विद्वानों का मत है कि अन्तःकरण में रस को उत्पन्न करके, और थोड़ी देर के लिए और बातों को भुला कर, उदार विचारों में मन को लीन कर देना ही कविता का सच्चा पर्यवसान है। कविता द्वारा यह भाषित होना चाहिए कि जो बात हो गई है वह अभी हो रही है; और जो दूर है वह बहुत निकट दिखलाई देती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



एक पण्डित का मत है कि कविता एक भ्रम है; परंतु वह सुखदायक है। उसका अच्छीं तरह उपभोग लेने के लिए थोड़ी देर तक अपनी सज्ञानता भूल जानी चाहिए। जो कुछ सीखा है उसका भी विस्मरण कर डालना चाहिए; और कुछ काल के लिए बालक बन जाना चाहिए। कमल के समान आँख नहीं होती; कोकिला का-सा कण्ठ किसी का नहीं होता; जो कुछ इसमें लिखा है, झूँठ है—इस प्रकार की बातें मन में आते ही कविता का सारा रस जाता रहता है। कविता में जो कुछ कहा गया है उसे ईश्वर-वाक्य मान कर उसका रस लेना चाहिए।

आजकल के इतिहास-वेत्ताओं का कथन है कि देश में जैसे-जैसे अधिक सुधार होता है और जैसे-जैसे विद्या-बुद्धि बढ़ती जाती है, वैसे-ही-वैसे कविता-शक्ति भी कम होती जाती है। अब पहिले के ऐसे अच्छे कवि नहीं होते। यह इस बात का प्रमाण है। यह बहुत ठीक है कि ज्यों-ज्यों हम प्राचीन काल की ओर देखते हैं त्यों-त्यों कविता विशेष रसाल दिखाई देती है। प्राचीन कवियों का सारा ध्यान अर्थ की ओर रहता था; भाषा की ओर बहुत ही कम रहता था। इसीलिए उनकी कविता में उनका हृद्गत-भाव बहुत ही अच्छीं तरह से ग्रथित हो जाता था। परन्तु उनके अनन्तर होने वाले कवियों में प्रबन्ध, शब्द-रचना और अलंकार आदिकों की ओर ध्यान अधिक जाने से कविता में अर्थ-सम्बन्धी हीनता आ गई है। एक बात और भी है। कविता के लिए एक प्रकार की भावुकता, एक प्रकार की सात्विकता और एक प्रकार का भोलापन दरकार होता है। वह समय के परिवर्तन से प्रतिदिन कम हो जाता है, इसीलिए पहले की जैसी कविता अब नहीं होती और प्राचीन कवियों की कविता के सरस होने का एक कारण यह भी है कि किसी प्रकार की आशा के वशीभूत होकर वे कविता न करते थे। सत्कृत्य द्वारा कालक्षेप करने अथवा परमेश्वर को भक्ति-द्वारा प्रसन्न

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



करने ही के लिए वे प्रायः कविता करते थे। यह बात अब बहुत कम पाई जाती है। कविता में हीनता आने का यह भी एक कारण है।

कविता से विश्रान्ति मिलती है। वह एक प्रकार का विराम स्थान है। उससे मनोमालिन्य दूर होता है और थकावट कम हो जाती है। चक्की पीसने के समय स्त्रियाँ, काम करने में मजदूर आदि, परिश्रम कम होने के लिये, गीत गाते हैं। जैसे मनुष्यों के लिए गाने की जरूरत है वैसे ही देश के लिए कविता की जरूरत है। प्रति दिन नये-नये गीत बनाते हैं और सब कहीं गाये जाते हैं। इसी नियमानुसार देश में समय-समय पर नई-नई कविताएँ हुआ करती हैं। यह स्वाभाविक किंवा नैसर्गिक योजना है।

---

## ५—नायिका भेद

औपन्यासिक पुस्तकों के लिये केवल काशी ही और तान्त्रिक पुस्तकों के लिये केवल मुरादाबाद ही इस समय प्रसिद्ध हो रहे हैं। परन्तु नायिका-भेद और नख-सिख वर्णन के लिये यह देश का देश ही, किसी समय प्रसिद्ध था। देश से हमारा अभिप्राय उन प्रान्तों से है जहाँ हिन्दी बोली जाती है और जहाँ हिन्दी ही में कविता-स्फूर्ति का प्रकाश होता है। राजाश्रय मिलने की देरी, राजाजी को सब प्रकार की नायिकाओं के रसास्वादन का आनन्द चखाने के लिए कविजी को देरी नहीं। १० वर्ष की अज्ञात-यौवना से लेकर ५० वर्ष की प्रौढ़ा तक के सूक्ष्म से सूक्ष्म भेद बतला कर और उनके हाव, भाव, विलास आदि की दिनचर्या वर्णन करके ही कविजन सन्तोष नहीं करते थे। दुराचार में सुकरता होने के लिए दूती कैसी होनी चाहिए, मालिन, नाइन, धोबिन इत्यादि में से इस काम के लिए कौन सब से अधिक प्रवीण होती है, इन बातों

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



का भी वे निर्णय करते थे। नायक के सहायक विट और चेटक आदि का भी वर्णन करने से वे नहीं चूकते थे। इस प्रकार की पुस्तकों अथवा कविताओं का बनाना अभी बंद नहीं, वे बराबर बनती जाती हैं। तथापि पहिले बहुत बनती थीं इसलिये हमने भूतकाल का प्रयोग किया है।

सब नायिकाओं में नवोढ़ा अधिक भली होने के कारण किसी ने अभी कुछ ही वर्ष हुए, एक "नवोढ़ादर्श" नाम की पुस्तक, अकेले नवोढ़ा ही नायिका की महिमा से आद्योपान्त भर कर, प्रकाशित की है। समस्यापूर्ति करने वाले कवि-समाजों और कवि मण्डलों का तो नायिका भेद जीवन-सर्वस्व हो रहा है, सुनते हैं, "सुकवि-सरोज-विकास" में भी नायिका भेद ही है। नवोढ़ाओं और विश्रब्ध नवोढ़ाओं ही की कृपा से हमारी भाषा की कविता-लता सूखने नहीं पाई। कविजन अब तक उसे अपने काव्य रस से बराबर सींच रहे है और मुग्धमति युवक उसकी शीतल छाया में शयन करके विषयाकृष्ट हो रहे हैं।

इस निबंध का नाम "नायिकाभेद" पढ़कर नायिका-भेद के भक्तों को यदि यह आशा हुई हो कि इसमें नवोढ़ा के सुरतांत और प्रौढ़ा के पुरुषायित-सम्बन्ध में कोई नवीन युक्ति उन्हें सुनने को मिलेगी तो उनको अवश्य हताश होना पड़ेगा। परन्तु हताश क्यों होना पड़ेगा? आजतक नायिकाओंका क्या कुछ कम वर्णन हुआ है? इस विषय में, हिन्दी साहित्य में, जो कुछ विद्यमान है उससे भी यदि उनकी काव्य रस पीने की तृषा शान्त न हो तो हम यही कहेंगे कि उनके उदर में बड़वानल ने निवास किया है।

ऋषियों के बनाये हुए संस्कृत-ग्रन्थों तक में नायिकाओं के भेद कहे गये हैं, परन्तु पद्माकर और मतिराम आदि के ग्रंथों का जैसा विस्तार वहाँ नहीं है नायिकाओं की भेद भक्ति हमारे यहाँ

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



बहुत प्राचीन काल से चली आई है। कालिदास के काव्यों में भी नायिकाओं के नाम पाये जाते हैं।

निद्रावशेन भवताप्यनत्र वेक्षमाणा
पर्य्युत्सुकत्वमबला निशि खण्डितेव ॥
लक्ष्मीर्विनोदयति येन दिगन्तलम्बी
सोऽपि त्वदाननरुचिं विजहाति चन्द्रः ॥

रघुवंश, सर्ग ५।

यहाँ खण्डिता नायिका का नाम आया है। संस्कृत में ऐसी अनेक पुस्तकें हैं जिनमें नायिकाओं की विभाग परम्परा और उनके लक्षणों का विवरण है। तथापि हिन्दी पुस्तकों की जैसी प्रचुरता संस्कृत में नहीं है। दशकरूपक और साहित्य दर्पण इत्यादि में प्रसङ्ग वश इस विषय का विचार हुआ है, परन्तु वे विचारे गौण हैं, मुख्य नहीं। जिसमें केवल नायिकाओं का ही वर्णन हो ऐसी पुस्तक संस्कृत में एक "रस-मञ्जरी" ही हमारे देखने में आई है। मिथिला के रहने वाले पण्डित भानुदत्त ने उसे बनाया है। भानुदत्त के अनुसार नायिकाओं के ११५२ भेद हो सकते हैं। इस पुस्तक में उन्होंने नायिकाओं का यद्यपि बहुत विस्तृत वर्णन किया है तथापि उनका वर्णन संस्कृत में होने के कारण इतना उद्वेग जनक और हानिकारक नहीं जितना सुरतारम्भ, सुरतान्त और "विपरीत" में विलग्न होनें वाले हमारे हिन्दी कवियों का है। इस विषय में हिन्दी-पुस्तकों का प्राचुर्य देखकर यही कहना पड़ता है कि इस अल्पोपयोगी नायिका-भेद में संस्कृत-कवियों की अपेक्षा हमारी भाषा के कवियों और भाषा की कविताओं के प्रेमियों की सविशेष रुचि रहती आई है। नगरों की बात जाने दीजिये, छोटे-छोटे गाँवों तक में साठ-साठ वर्ष के बुड्ढों को भी नायिका-भेद की चर्चा करते और ज्ञात-यौवना और अज्ञात-यौवना के अन्तर के तारतम्य पर वक्तृता देते हमने अपनी आँखो देखा है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



निश्चयात्मकता से हम यह नहीं कह सकते कि नायिका-भेद की उत्पत्ति कब से हुई और क्यों हुई। वात्सायन मुनि-कृत "काम-सूत्र" बहुत प्राचीन ग्रंथ है। उसमें नायिका और नायिकाओं के सामान्य भेद कहे गये हैं। ये भेद वैसे ही हैं जैसे इस प्रकार की पुस्तकों में हुआ करते हैं। वह आडम्बर और वह अश्लीलता जो आजकल के नायिका-भेद में पाया जाता है, वहाँ बिल्कुल नहीं। जान पड़ता है, इसी प्रकार के ग्रंथ नायिका-भेद की उत्पत्ति के कारण हैं। सम्भवतः इन्हीं को देखकर नायिकाओं के पक्षपातियों ने इसे पृथक् विषय निश्चित करके पृथक्-पृथक् अनेक ग्रंथ रच डाले और सैकड़ों, नहीं हजारों, भेद उत्पन्न करके सब रसों के राजा का राज्य-विस्तार बहुत ही विशेष बढ़ा दिया नायिकायें ही श्रृंगार-रस की अवलम्बन हैं, और श्रृंगार रस ही सब रसों का राजा है ! राजा का जीवन ही जब इन नायिकाओं पर अवलम्बित है तब कहिए क्यों हमारे पुराने साहित्य में इनकी इतनी प्रतिष्ठा न हो ? इनकी कीर्ति का कीर्तन करके क्यों कविजन अपनी वाणी को सफल न करें ? और इन्हीं की बदौलत नाना प्रकार के पुरस्कार पाकर क्यों न वे अपने को कृतकृत्य मानें ?

कृष्ण, राधा, गोपिका, वृन्दावन, यमुना, कुञ्जकुटीर आदि ने नायिका-भेद के वर्णन में विशेष सहायता पहुँचाई है, परन्तु यदि कोई यह कहे कि यह भेद-वर्णन राधाकृष्ण के उपासना—तत्व से सम्बन्ध रखता है तो उसका कथन कदापि मान्य नहीं हो सकता। नायिकाओं में "सामान्य" एक ऐसा भेद है जिससे कृष्ण का कोई सम्पर्क नहीं और नायिका-भेद के आचार्यों ने कृष्ण को नायिकाओं के भेद नहीं किये, किन्तु सामान्य रीति से नायिक-मात्र की भेद-परम्परा बतलाई है अतएव कृष्ण के उपासकों के लिये इस विषय पर कृष्ण का सम्बन्ध न बतलाना ही अच्छा है।

जहाँ तक हम देखते हैं स्त्रियों के भेद वर्णन से कोई लाभ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



नहीं, हानि अवश्य है; और बहुत भारी हानि है। फिर हम नहीं जानते, क्या समझ कर लोग इस विषय के इतने पीछे पड़े हुए हैं। आश्चर्य इस बात का है कि इस भेद-भक्ति के प्रतिकूल आज तक किसी ने चकार तक मुख से नहीं निकाला। प्रतिकूल कहना तो दूर रहा, नायिकाओं की नई-नई चेष्टाओं का वर्णन करने वालों को प्रोत्साहन और पुरस्कार तक दिया गया है। इन प्रोत्साहनों का फल यह हुआ कि नवोढ़ा आदि नायिकाओं के सम्बन्ध में कवियों को अनन्त स्वप्न देखने पड़े हैं। हिन्दी के समान बँगला, मराठी, गुजराती भाषाएँ भी संस्कृत से निकली हैं, परन्तु इन भाषाओं में नायिकाओं का कहीं भी उतना साम्राज्य नहीं जितना हिन्दी में है। हिन्दी में इनका आधिक्य क्यों? जान पड़ता है, और कहीं भी ठहरने के लिए सुखदाई स्थान न पाकर बेचारे नायिका-भेद ने विवश होकर हिन्दी का आश्रय लिया है। इस विस्तृत विश्व से ईश्वर ने इतने प्रकार के मनुष्य, पशु, पक्षी, बन, निर्झर, नदी, तड़ाग आदि निर्माण किये हैं कि यदि सैकड़ों कालिदास उत्पन्न होकर अनन्त काल तक उन सबका वर्णन करते रहें तो भी उनका अन्त न हो। फिर हम नहीं जानते और विषयों को छोड़कर नायिका-भेद सदृश अनुचित वर्णन क्यों करना चाहिए? इस प्रकार की कविता करना वाणी की विगर्हणा है।

अब देखिए, इस प्रकार की पुस्तकों में लिखा क्या रहता है। लिखा रहता है परकीया (परस्त्री) और वेश्याओं की चेष्टा और उनके कलुषित कृत्यों के लक्षण और उदाहरण! परकीया के अन्तर्गत अविवाहित कन्याओं के पापाचरण की कथा!! पुरुषमात्र में पतिबुद्धि रखने वाली कुलटा स्त्रियों के निर्लज्ज और निरर्गल प्रलाप!!! और भी अनेक बातें रहती हैं। विरह-निवेदन करने अथवा परस्पर मेल करा देने के लिए दूतों और दूतियों की योजना का वर्णन रहता है; वेश्याओं को बाजार में बिठला कर उनके

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



द्वारा हजारों के हृदय-हरण किये जाने की कथा रहती है। परकीयाओं के द्वारा, कबूतर के बच्चे की जैसी कूजित के मिष, पुरुषों में आह्वान की कहानी रहती है, कहीं कोई नायिका अँधेरे में यमुना के किनारे दौड़ी जा रही है; कहीं कोई चाँदनी में चाँदनी ही के रङ्ग की साड़ी पहनकर घर से निकल, किसी लता-मण्डप में बैठी हुई किसी की मार्ग प्रतीक्षा कर रही है; कहीं कोई अपनी सास को अन्धी और अपने पति को विदेश गया बतलाकर द्वार पर आये हुए पथिक को रात भर विश्राम करने के लिए प्रार्थना कर रही है; कहीं कोई अपने प्रेम-पात्र के पास गई हुई सखी के लौटने में बिलम्ब होने से कातर होकर आसुओं की धारा से आँखों का काजल बहा रही है!!! यही बातें विलक्षण उक्तियों के द्वारा, इस प्रकार की पुस्तकों में विस्तार-पूर्वक लिखी गई हैं। सदाचरण का सत्यानाश करने के लिये क्या इससे बढ़ कर कोई युक्ति हो सकती है? युवकों को कुपथ पर ले जाने के लिये क्या इससे भी अधिक बलवती और कोई आकर्षण-शक्ति हो सकती है? हमारे हिन्दी-साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकों का आधिक्य होना हानिकारक है; समाज के चरित्र की दुर्बलता का दिव्य-चिह्न है। हमारी स्वल्प बुद्धि के अनुसार इस प्रकार की पुस्तकों का बनाना शीघ्र ही बन्द हो जाना चाहिये, और यही नहीं, किन्तु आजकल ऐसी-ऐसी जितनी इस विषय की दूषित पुस्तकें बनी हैं उनका वितरण होना भी बन्द हो जाना चाहिए। इन पुस्तकों के बिना साहित्य को कोई हानि नहीं पहुँचेगी; उलटा लाभ होगा। इसके न होने से भी समाज का कल्याण है। इसके न होने से ही नववयस्क मुग्धमतियुवा-जन का कल्याण है। इसके न होने से ही इनके बनाने और बेचने वालों का कल्याण है।

जिस प्रकार नायिकाओं के अनेक भेद कहे गये हैं और भेदानुसार उनकी अनेक चेष्टाएँ वर्णन की गई हैं, उसी प्रकार पुरुष के भी भेद और चेष्टा-वैलक्षण्य का वर्णन किया जा सकता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जब नवोढ़ा और विश्रब्ध नवोढ़ा नायिका होती हैं तब नवोढ़ और विश्रब्ध-नवोढ़ नायक भी हो सकते हैं। वासकसज्जा, विप्रलब्धा और कलहान्तरिता नायिका के समान वासकसज्ज, विप्रलब्ध और कलहान्तरित नायक होने में क्या आपत्ति हो सकती है? कोई नहीं। क्या स्त्री ही अज्ञात-यौवन होती है? पुरुष अज्ञात-यौवन नहीं होता? "रसमंजरी" वाले कहते हैं कि स्वभाव भेद से पुरुषों के चार ही भेद होते हैं—अर्थात् अनुकूल, दक्षिण, धृष्ट और शठ, परन्तु अवस्था भेद से स्त्रियों के अनेक भेद होते हैं। यह बात हमारी समझ में नहीं आती। मनोविकार दोनों में प्रायः एक ही से होते हैं। जिस प्रकार के लक्षण और उदाहरण नायिकाओं के विषय में लिखे गये हैं, उसी प्रकार के लक्षण और उदाहरण प्रायः पुरुषों के विषय में भी लिखे जा सकते हैं। परन्तु हमारी भाषा के कवियों ने नायकों के ऊपर इस प्रकार की पुस्तकें नहीं लिखीं। इसलिये हम उनको अनेक धन्यवाद देते हैं। यदि कहीं वे इस ओर भी अपनी कवित्व-शक्ति की योजना करते, तो हमारा कविता-साहित्य और भी अधिक चौपट हो जाता।

---

## ६—हंस सन्देश

संस्कृत में सहृदयानन्द नामक एक बहुत ही सरस काव्य है। उसके कर्त्ता कवि की जबानी एक पुरानी कथा सुनिए।

निषध देश का राजा नल, एकबार, बनविहार को निकला। नगर से कुछ दूर जाने पर, एक उपवन में, उसने एक मनोहर तालाब देखा। उसमें कमल खूब खिल रहे थे। मछलियाँ खेल रही थीं और अनेक प्रकार के जल पक्षी कलोल कर रहे थे। वहाँ पर



Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



उसने एक बहुत ही मनोहर हंस देखा। राजा को वह इतना पसन्द आया कि उसने उसे सजीव पकड़ना चाहा। इसलिये उसने अपने निषङ्ग से एक सम्मोहन शर, उसपर चलाने के लिये, निकाला। शर को उसने शरासन पर रक्खा ही था कि उसने एक अलक्षित वाणी सुनी। उस वाणी का मर्म यह था कि—

"हे नरेश, इस पर वाण मत छोड़। यह तेरा अभीष्ट सिद्ध करेगा। तेरे ही रूप-गुण-सम्पदा के अनुरूप यह तुझे एक त्रिभुवन-मोहनी राज-कन्या प्राप्त करा देगा। उसे तू अपनी महिषी बनाना।"

यह सुनकर उस आकर्णकृष्ट वाणको राजा ने उतार लिया।

नल की इस दयालुता पर वह हंस बहुत प्रसन्न हुआ। वह अपना स्थान छोड़कर नल के कुछ निकट आया और बोला—"हे निषधनाथ, ईश्वर तेरा कल्याण करे। तूने मुझ पर दया दिखाई है। इसके बदले में मैं भी तेरी कुछ सेवा करना चाहता हूँ। तू मुझे साधारण पक्षी मत समझ। मैं ब्रह्मा के रथ को खींचता हूँ, इन्द्र के सिंहासन के पास बैठता हूँ; जयन्त इत्यादि देव-बालकों के साथ खेलता हूँ, और मन्दाकिनी के किनारे विहार किया करता हूँ, तूने अपने नृपोचित गुणों से इस भूमण्डल को स्वर्ग से भी अधिक सुषमाशाली कर रक्खा है इसलिये कभी-कभी मैं यहाँ भी घूमने आ जाता हूँ। मैं चाहता हूँ कि जैसे और देवता मुझसे सख्य-भाव रखते हैं वैसे ही तू भी रख।"

नल ने इस बात को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया। आज से तू मेरे प्राणों से अधिक प्यारा हुआ, यह कह कर राजा ने बड़े ही प्रेम से उस पक्षी के शरीर पर अपना कर-कमल फेरा। कुछ देर तक वे दोनों परस्पर प्रेमालाप करते रहे। अनन्तर नल के लिये एक कन्या-रत्न ढूँढ़ने के निमित्त, हंस ने, राजा की अनुमति पाकर, वहाँ से प्रस्थान किया। राजा भी नगर की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



तरफ लौटा, परन्तु शरीर मात्र से; मन से नहीं। मन उसका हंस ही के साथ उड़ गया था।

हंस के वियोग में नल को बड़ा दुःख हुआ। दिन-रात वह उसी का चिन्तन करने लगा। किसी काम में उसका दिल न लगने लगा। इस समय वसन्त का आविर्भाव हुआ। इससे उसे और भी अधिक पीड़ा हुई। बसन्त बिरहियों का बैरी है। अतएव दिल बहलाने के लिये, अपने उद्यान में, एक बावली के किनारे-राजा जा बैठा। वहाँ वह सैकड़ों तरह की भावनाएँ कर रहा था कि सहसा उसका परिचित वही हंस वहाँ आता हुआ उसे देख पड़ा। राजा को परमानन्द हुआ। उसे खोई हुई निधि-सी मिली। नल ने उस दिव्य हंस को अपनी गोद में बिठाया। कुशल समाचार पूछने के अनन्तर राजा ने उसे अपने हाथ से मृणालांकुर खिलाये रास्ते की उसकी सारी थकावट जाती रही। नल ने हंस से सुना कि स्वर्गलोक में जितने शहर, गाँव और कस्बे हैं, सबमें उसके यशोगीत गाते जाते हैं। गन्धर्व-नारियों, किन्नरियों और सुराङ्गनाओं को अब और किसी विषय के गीत अच्छे नहीं लगते। औरों को लोग सुनते भी नहीं। इससे गायक और गायिकाएँ बहुधा यहाँ आती हैं; उसके नये नये चरित्र सुनती हैं; और उन्हीं के आधार पर श्लोक, गजल और गीतों की वे रचना करती हैं।

मामूली बातें हो चुकने पर हंस ने मतलब की बात शुरू कीं, जिसे सुनने लिये नल घबरा रहा था। उसने कहा—मित्र, तेरे लिए एक अनन्य-साधारण कन्या ढूँढ़ने में मुझे बड़ी हैरानी उठानी पड़ी। ऊपर जितने लोक है; सबकी खाक मैंने छान डाली। पर एक भी सर्वोत्तम रूपवती मुझे न देख पड़ी। तब मैंने ठेठ अमरावती को राह ली। वहाँ पर भी मैंने एक-एक घर ढूँढ़ डाला। तिस पर भी मेरा काम न हुआ। मेरे चेहरे पर उदासी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



छा गई। मैं डरा, मुझे यह विश्वास होने लगा कि मेरी प्रतिज्ञा भङ्ग हो जायगी। मैं अपना प्रण पालन न कर सकूँगा; मुझे तेरे लायक कोई कामिनी न मिलेगी। जब अमरावती ही में नहीं, तब उसके होने की और कहाँ सम्भावना हो सकती है? इसी सोच विचार में मेरे मिनट, घण्टे और दिन जाने लगे। एक दिन मेरा जी बहुत ऊबा। इसलिए मैं देवराज की सभा में गया। मैंने कहा—चलो, वहीं चलकर कुछ देर जी बहलावें।

वहाँ मैंने देखा कि सब देवता यथास्थान बैठे हैं। साहित्य-शास्त्री देवता, महाराजा अयोध्या के रसकुसुमाकर पर वाद-विवाद कर रहे हैं। कोई इस नायिका में दोष निकाल रहा है, कोई उसमें। कोई कहता है, रूप नहीं अच्छा; कोई कहता है भाव नहीं अच्छा। इसी तरह लोग अपनी-अपनी हाँक रहे हैं। इस खींचा-तानी को देख कर सुरेन्द्र ने कामेश्वर शास्त्री की तरफ देखा। इन शास्त्री महाराज का जन्म सृष्टि के आदि का है। पर इतने बूढ़े हो जाने पर भी नायिकाओं के गुणदोष की पहचान में आप अपना सानी नहीं रखते। यही समझ कर सुरेन्द्र महाराज ने आज्ञा दी कि शास्त्रीजी, अब आप भी कुछ कहिए, आपकी राय में कौन रमणी सबसे अधिक रूपवती है?

कामेश्वर जी ने सुरेश्वर की आज्ञा सिर पर रक्खी। अपनी पगड़ी के ढीले पेचों को उन्होंने कड़ा किया। फिर उन्होंने वक्तृता आरम्भ की। आप बोले—

अमरराज, इनमें से एक भी नायिका मुझे अच्छी नहीं जँचती। सब में कोई न कोई दोष है। मेरी गृहिणी को यह घमंड था कि मैं बहुत रूपवती हूँ। इससे वह कभी-कभी मुझे भी कुछ न समझती थी। एक बार उसका गर्व-गर्भित व्यवहार मुझे दुःसह हो उठा, इसलिए मैंने उसके गर्व को दूर करना चाहा। मैं एक सर्वाङ्गसुन्दरी रमणी की खोज में निकला। इसमें मैं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



बहुत दिन तक हैरान रहा। आखिर को मुझे कामयाबी हुई। विदर्भ-देश के राजा भीम की कन्या दमयन्ती को देख कर मैं स्तम्भित हो गया। वैसी सुन्दरी मैंने कभी नहीं देखी थी! उसका चित्र मैं खींच लाया। उसे देख कर मेरी घरवाली की अक़ल ठिकाने आ गई। तब से उसका गर्व दूर हो गया और वह मुझे वक्त पर रोटी देने लगी।

एक घण्टे तक, साहित्याचार्य कामेश्वर शास्त्री ने दमयन्ती के रूप का वर्णन किया। उस समय सुरेन्द्र-सभा में अनेक सुन्दरियाँ बैठी हुई थीं। दमयन्ती का नखशिख-वर्णन सुन कर उनकी अजीब हालत हुई। वे एक-दूसरे का मुँह ताकने लगीं। तिलोत्तमा का चेहरा काले तिल के समान काला पड़ गया। मदालसा का सौंदर्य-मद उतर गया। सुलोचना ने अपने लोचन बन्द कर लिए। सुमध्यमा सखियों के मध्य में छिप गई। मेनका का मन मलिन हो गया। कलावती अपनी कलाओं को भूल गई। सुविभ्रमा का विभ्रम भ्रम में पड़ गया। शशिप्रभा निष्प्रभ हो गई और चित्र-लेखा चित्र के समान बैठी रह गई।

शास्त्रीजी की बात सुन कर मैं बहुत खुश हुआ। मैं वहाँ से फौरन ही उड़ा। कोई दो घण्टे में विदर्भपुरी में दाखिल हुआ। वहाँ मैं दमयन्ती के प्राङ्गण में पहुँचा। उस जगह एक हौज था। उसमें एक फव्वारा था। उसकी चोटी पर मैं जा बैठा। कुछ देर में मुझे वहाँ दमयन्ती देख पड़ी। उसके रूप को देख कर मैं अचरज में पड़ गया। मित्र, इसके पहले मैंने वैसी सुन्दरी कहीं न देखी थी। रूप-वर्णन में शास्त्रीजी की जड़ता का मुझे तब अन्दाज हुआ। कहाँ दमयन्ती का भुवन-मोहन रूप और कहाँ शास्त्रीजी का शुष्क वर्णन। दोनों में आकाश-पाताल का अन्तर! आखिर बूढ़े ही तो ठहरे!

मैंने देखा, दमयन्ती की दशा अच्छी नहीं। वह उदास है।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



इसलिये उसकी चिन्ता का कारण जानने की इच्छा से मैं वहीं ठहर गया। उस हौज के पास दमयन्ती के कई क्रीड़ा-हंस भी थे। इन्हीं के साथ मैं भी इधर-उधर घूमने और दमयन्ती की चर्य्या अवलोकन करने लगा। मैं बीच-बीच में मनुष्य की बोली बोलने लगा। उसे सुन कर दमयन्ती को बड़ा कौतूहल हुआ। वह मेरी तरफ बार-बार देखने लगी। मैं यही चाहता था। इतने में विघ्न हुआ। दमयन्ती को खेदवती देख, एक सखी उसमें खेद का कारण पूछने लगी। वह बोली—

"सखी लवलीलता के समान तेरी गण्डस्थली पीली पड़ गई है। लाल कमल के समान अपने कोमल कर-पल्लव के बोझ से उसे तू क्यों तङ्ग कर रही है? देख, यह निष्करुण पिक अध-खिली कलियों वाली आम की इस पतली शाखा को पीड़ित कर रहा है। क्यों नहीं तू उसे अपनी करमालिका से उड़ा देती? सुगन्ध के लोलुप ये भ्रमर खिले हुए फूलों को छोड़ कर तेरी तरफ आते हैं, पर व्याकुल होकर वे पीछे हट जाते हैं। इससे जान पड़ता है कि सन्ताप से तेरा श्वास तप रहा है। तेरे कान में खोंसे हुए तमाल-दल को खींचने में जिसे तत्पर देख कौतूहल होता था, वह हरिण-शावक तुझे खिन्न-हृदय जान कर मुँह में रक्खे गये दर्भाङ्कुरों को भी नहीं खाता। करतल में रख कर जिसे तू अनेक प्रकार की सरस बातें सिखलाती थी, वह तेरा क्रीड़ा-शुक, तुझे चुप देख, ऐसा मूक हो रहा है जैसे अभी नया जङ्गल से पकड़ आया हो। अपने इस केलि-हंस को तो तू जरा देख। उसकी सहचरी आगे चल कर बड़ी ही मधुर और रस-भरी वाणी से, उसे पुकार रही है। परन्तु वह उसके पास नहीं जाता। वह चाहता है कि तू अपने पाणि-पल्लव से मृणाल का एक टुकड़ा उसकी चोंच में रख दे। क्या बात है? हैं, क्या कारण कि यह अतर्कित आई हुई पियराई, कनक-चम्पक के समान तेरी गौर-

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कांति को बिगाड़ रही है ? एक तो तू स्वयं ही दुबली-पतली थी, तिस पर यह अधिक दुबलापन क्यों ?"

इस प्रकार सैकड़ों तरह की बातें दमयन्ती की सखी ने उससे पूछीं, परन्तु उत्तर में, दमयन्ती के मुँह से एक भी शब्द न निकला। वह पूर्ववत् चुपचाप बैठी रही। हाँ, एक लम्बी उसाँस मात्र उसने ली। तब उसकी एक और सखी बोली। दमयन्ती के मौनावलम्बन और दुबलेपन का कारण वह समझ गई थी। उसने कहा—

"इसका पिता इसे एक योग्य-वर को देना चाहता है। इसलिए उसने, कुछ समय हुआ, अनेक चतुर चित्रकारों को बुलाया। उनसे उसने हजारों रूप-गुण-सम्पन्न राजकुमारों के चित्र तैयार कराये। एक दिन वे चित्रफलक मेरी नजर में पड़ गये। मुझ पर मूर्खता सवार हुई। मैं उनको इसके पास उठा लाई। इसने बड़े ध्यान से उनमें से एक-एक को देखा। देखते-देखते एक त्रिलोकी-तिलक युवा पर यह मोहित हो गई। तभी से इसकी हालत खराब है। तभी से यह अथाह चिन्ता-सागर में गोते खाती जा रही है।

इसके शरीर के भीतर जलने के भय से इसकी श्वास-वायु इससे दूर भाग रही है। आँसुओं की धारा में डूब जाने के डर से नींद इसके नयनों के पास नहीं आती। उशीर का लेप लगाने से यह और भी अधिक सन्तप्त हो उठती है। कमलिनी-दलों के पंखे को देख कर इसे क्रोध आता है। जिसने इसके हृदय में प्रवेश किया है, उसी सुभग का यह सतत स्मरण करती रहती है। इसका सन्ताप मुझे तो, इस तरह, दुर्निवार मालूम होता है। खिड़की की राह से चन्द्रमा को देखने में इस चञ्चलाक्षी को पीड़ा होती है। इसलिए यह अपना मुँह नीचा कर लेती है। पर ऐसा करने से इसका मुँह इसके वक्ष-स्थल में प्रतिबिम्बित हुआ देख पड़ता है। उसे देख चन्द्रमा के धोखे यह बेतरह काँप उठती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



एक तो स्वभाव ही से यह सुकुमार और दुबली थी, फिर मनोज ने इसे और भी दुर्बल कर दिया। यह देख कर इसके हाथ के कङ्कणों को यह सन्देह हुआ कि अब यह हमारा बोझ न सह सकेगी। इसलिए देखो, वे जमीन पर जा गिरे हैं। यह कुमुदिनी इस पापिष्ठा चाँदनी से अभी तक प्रीति रखती है। सखी, इसको किसी वस्तु से ढक दे, जिसमें इसे चन्द्र-किरणों का स्पर्श न हो। नहीं तो, कहीं, इसे भी मेरे समान ज्वर न आ जाय। इस तरह यह बार-बार, कहा करती है। न इसे सघन वृक्षों की छाया से शीतल उद्यान में आराम मिलता है, न चन्दन-चर्चित और मणि-मण्डित-अट्टालिका में आराम मिलता है, और न चन्द्र-मरीचियों से धौत महल के भीतर ही आराम मिलता है।

इस प्रकार दमयन्ती की गुप्त चेष्टाओं का वर्णन करके उसकी सखियाँ उस समय के अनुकूल उपचार करने लगीं। उन्होंने कमलिनी-दलों की एक कोमल शय्या प्रस्तुत करके उस पर उसे लिटाया। पर बेचारी दमयन्ती को उस महाशीतल शय्या पर वैसा ही सन्ताप हुआ, जैसा कि मार्त्तण्ड की प्रचण्ड किरणों से उत्तप्त हुए गढ़े में पड़ी हुई मछली को होता है। उसे बहुत ही व्याकुल देख उसकी सबसे प्यारी सखी ने ताजी मृणाल-लता को उसके कण्ठ पर रक्खा कि कुछ तो उसे ठंडक पहुँचे। परन्तु हुआ क्या? उसके ताप की प्रचण्डता से वह मृणाल-लता नीलम के समान काली हो गई!

इस प्रकार दुर्निवार ताप से तपी हुई उस बाला को देख मुझे दया आई। मैं धीरे-धीरे उसके पास गया और अपने पंखों से उस पर हवा करने लगा। मुझे इस तरह अपनी सेवा करते देख उसने अपनी दृष्टि मेरी तरफ फेरी। तब, अवसर पाकर मैंने उससे कहा——

"तरुणी, जिस तरुण का तू चिन्तन करती है वह धन्य है

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



उसके पुण्य की सीमा नहीं। जो युवा तुझसे प्रेम-बन्धन करने की अभिलाषा रखते हैं उनको मैं त्रिभुवन में सबसे बड़ा भाग्यशाली समझता हूँ। सुन्दरि, सुरेन्द्र के समान देवता भी तुझे पाने की कामना करते हैं। तब यदि, मनुष्यों में तेरा प्रार्थित तरुण तुझे न मिले, तो बड़े आश्चर्य की बात है। तेरे स्मरण के कारण, मन्दार-मालाओं से अलंकृत मणि-मन्दिरों में इन्द्राणी के साथ बात-चीत करना भी इन्द्र को अच्छा नहीं लगता। क्षीर-सागर के ठीक बीच में रहकर भी, और सैकड़ों नदियों के द्वारा चरणस्पर्श किये जाने पर भी तेरे सोच में, वारिपति वरुण को ज्वर चढ़ रहा है। तेरे कारण पञ्चशर से पीड़ित किया गया कुबेर आँखे बन्द करके चन्द्र-मौलि के पास से हटकर, उनकी सखियों के पास चला जाता है। चंद्रचूड़ की चूड़ा के चन्द्रमा की किरणें उससे नहीं सही जातीं। तेरे त्रैलोक्य-मोहक तनु को देखकर भगवान् अरविन्द-बंधु ( सूर्य ) को रोगान्ध रोग हो गया है। इसी से पृथ्वी के चारों ओर वे दिन-रात गतागत किया करते हैं। गिरिजा को गिरीश के बाम भाग में बैठी हुई देखकर यदि तुझे स्पर्धा उत्पन्न हुई हो तो साफ-साफ मुझसे तू वैसा कह दे। मैं तुझे बहुत जल्द उनके दाहिने भाग में बिठला दूँ। अधिक कहना सुनना मैं व्यर्थ समझता हूँ। यदि तू कहे तो मैं तुझे लेकर दूसरी लक्ष्मी के समान, नारायण के अङ्क में अभी बिठला आऊँ। मैंने तेरे सामने बहुत से देवताओं के नाम लिये। त्रिलोकी में जितनी बिलासिनियाँ हैं, उनके लिये वे सभी दुर्लभ हैं। कृपा करके अब तू मुझे बतला दे कि उनमें से तू किसे अपने पाणिपीड़न से सबसे अधिक भाग्यवान् बनाना चाहती है। मेरी ये मीठी-मीठी बातें सुनकर तू मुझे कहीं पिंजड़े के शुक के समान, वृथा बकवादी मत समझना। मैं ब्रह्मा का वैमानिक हूँ। मेरे लिए दुनिया में कोई वस्तु दुष्कर नहीं।"

यह सुनकर उस मृगाक्षी को मेरी बातों पर विश्वास आ गया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



और उसने उस फलक को, जिस पर तेरी तस्वीर थी बड़े प्रेम से अपनी छाती से लगाया। तुझमें, इस तरह अनुरक्त हुई उस बाला को देख कर मैंने अपना प्रयास सफल समझा। मैंने कहा—"यह वीर युवक मधु है, तू माधवी है। यह कुमुद-बंधु है, तू कौमुदी है। ऐसी अनुपमेय जोड़ी का सम्बंध इस तरह चिरकाल तक सुखकारक हो। इस तरह उसको विश्वास दिला कर तेरे पास आने की इच्छा से ज्यों ही मैं उड़ने को हुआ त्यों ही उसने अपने कंबु-कंठ से उतार कर, यह हार मेरे गले में डाल दिया। चन्द्रमा की चन्द्रिका से भी अधिक निर्मल, तेरी प्रिया की दूसरी हृदय-वृत्ति के समान, यह मुक्तालता तेरे हृदय को आनन्दित करे।"

इस माला को नल ने बड़े आदर से लिया। उसको स्पर्श करते ही उसका शरीर कण्टकित हो आया। उसे उस समय यह भावना हुई कि एक छेद होने के कारण इसको मेरी प्रियतमा के अङ्ग का स्पर्श हुआ। पर शायक के पञ्चशायकों से किये गये सैकड़ों छेदों को हृदय में धारण करके भी मुझे अभी तक उसके दर्शन तक नहीं हुए। मैं बड़ा ही अभागा हूँ। कुछ देर तक वह ऐसी ही ऐसी चिन्ताओं में निमग्न रहा। जब वह उस चिन्ता-समुद्र से उन्मज्जित हुआ तब, आनन्द से पुलकित होकर, अपने निर्व्याज मित्र उस हंस को उसने हृदय से लगा लिया। माँगने से कल्पवृक्ष मांगी हुई चीज देता है और चिन्तामणि चिन्तन करने पर चिन्तित पदार्थ के पास पहुँचता है। परन्तु बिना प्रार्थना और चिन्तन ही के मुझे एक अलौकिक प्रियतमा-रत्न प्राप्त करने की चेष्टा करके तू ने इन दोनों को नीचे कर दिया। इस प्रकार राजा नल पक्षी से कह ही रहा था कि सायंकाल का शङ्ख बजा और उसे सायन्तनी कृति के लिये उठकर महलों में जाना पड़ा।

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



# ७—हंस का नीर-क्षीर विवेक

संस्कृत-साहित्य में हंस, पिक, भ्रमर और कमल की बड़ी धूम है। बिना इनके कवियों की कविता फीकी हो जाती है। कोई पुराण, कोई काव्य, कोई नाटक ऐसा नहीं जिसमें इनका जिक्र न हो। सब में कवियों ने एक न एक विशेषता भी रक्खी है। यथा—हंस, मिले हुए दूध और पानी को अलग-अलग कर देता है; दूध पी लेता है और पानी छोड़ देता है। पिक अपने बच्चे कौओं के घोसलों में रख आता है और बड़े होने तक उन्हीं से उनकी सेवा कराता है। भ्रमर, आम की मंजरी से अतिशय प्रेम रखता है, पर चम्पे के पास तक नहीं जाता। कमल चन्द्रमा से द्वेष रखता है, उसकी विद्यमानता में वह कभी नहीं खिलता; पर सूर्य का वह परम भक्त है। इनमें से दो एक बातें तो निःसन्देह सही हैं; पर औरों के विषय में मतभेद हैं। उदाहरण के लिए हंस और उसके नीर-क्षीर-विषयक विवेक को लीजिए।

संस्कृत काव्यों में जगह-जगह पर यह लिखा हुआ है कि हंस में यह शक्ति है कि वह दूध और पानी को अलग-अलग कर देता है। पर दूध और पानी को अलग-अलग करते उसे किसी ने नहीं देखा। शायद किसी ने देखा भी हो, पर इस विषय का कोई लेख कहीं नहीं मिलता। यह प्रवाद सात समुद्र पार करके अमेरिका पहुँचा। वहाँ के विद्वानों को हंस का यह अद्भुत गुण सुन कर आश्चर्य हुआ। पर वे लोग ऐसी-ऐसी बातों को चुपचाप मान लेने वाले नहीं। इस देश में हंस-विषयक यह प्रवाद हजारों वर्षों से सुना जाता है। पर इसके सत्यासत्य की जाँच आज तक किसी ने नहीं की! यदि किसी ने की भी हो तो उसका फल कहीं लिपिबद्ध नहीं मिलता। अमेरिका में हवार्ड नाम का एक विश्वविद्यालय है। उसमें लाँगमैन साहब एक अध्यापक हैं। अपने हंस के इस अलौ-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



किक गुण की परीक्षा का प्रण किया। इसलिए आपने कई हंस मँगा कर पाले और अनेक तरह से उनकी परीक्षा की। पर नीर को क्षीर से अलग करने में उन्होंने हंस को असमर्थ पाया, तो हंस के नीर-क्षीर-विवेक विषयक वाक्यों की क्या संगति हो? इस विषय के दो-चार वाक्य सुनिए—

नीर-क्षीर-विवेके हंस्यालस्यं त्वमेव तनुषे चेत्।
विश्वस्मिन्नधुनान्यः कुलव्रतं पालयिष्यति कः॥

—भामिनीविलास।

हे हंस, यदि क्षीर को नीर से अलग कर देने का विवेक तू ही शिथिल कर देगा तो, फिर इस जगत् में अपने कुलव्रत का पालन और कौन करेगा?

वितीर्णशिक्षा इव हृत्पतस्थ सरस्वतीवाहनराज हंसैः।
ये क्षीर-नीर-प्रविभागदक्षा यशस्विनस्ते कवयो-जयन्ति॥

——श्रीकण्ठचरित।

हृदय में स्थित सरस्वती के वाहन राजहंसों ने मानो जिनको शिक्षा दी है, ऐसे क्षीर-नीर-विभाग करने में दक्ष कविजनों की महिमा खूब जागरूक है।

यो हनिष्यति वध्यं त्वां रक्ष्यं रक्षति च द्विजम्।
हंसो हि क्षीरमादत्ते तन्मिश्रां वर्जयत्यपः॥

——शकुन्तला।

हंस जिस तरह क्षीर ग्रहण कर लेता है और उसमें मिला हुआ पानी पड़ा रहने देता है, वैसे ही यह भी बध करने योग्य मुझे मारेगा और रक्षणीय द्विज की रक्षा करेगा।

प्रज्ञास्तु जल्पता पुंसां श्रुत्वा वाचः शुभाऽशुभाः।
गुणावद्वाक्यमादत्ते हंसः क्षीरमिवाम्भसः॥

——महाभारत——आदिपर्व

लोगों के मुँह से भली-बुरी बातें सुन कर बुद्धिमान् आदमी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अच्छी बात को वैसे ही ग्रहण कर लेता है, जैसे हंस जल में से दूध को ग्रहण कर लेता है।

यजुर्वेद के तैत्तिरीयब्राह्मण के दूसरे अध्याय में एक वाक्य है। उसका मतलब है—जिस तरह क्रौञ्च-पक्षी जल और दूध को अलग-अलग करके दूध का ही पान करता है, उसी तरह इन्द्र भी जल से सोमरस को अलग करके उसका पान कर लेता है। इसकी टीका सायनाचार्य ने इस प्रकार की है—

क्षीरपात्रे स्वमुखे प्रक्षिपते सति मुखगतरससम्पर्कात्क्षीरांशो जलांशश्चोभौ विविच्यते।

अर्थात्—जल-मिश्रित दूध के वर्तन में हंस जब अपनी चोंच डालता है, तब मुख गत रस-विशेष का योग होते ही जल और दूध अलग-अलग हो जाते हैं, या अलग-अलग जान पड़ते हैं।

इस पिछले अवतरण से यह सूचित होता है कि किसी-किसी की राय में हंस के मुँह में एक प्रकार का रस होता है। उस रस का मेल होने से पानी और दूध अलग-अलग हो जाते हैं। यदि इस रस में खट्टापन हो तो दूध का जम कर दही हो जाना संभव है। पर इसके लिये कुछ समय चाहिए। क्या हंस की चोंच दूध के भीतर पहुँचते ही दूध जम जाता होगा? सम्भव है, जम जाता हो, पर यह बात समझ में नहीं आती कि पात्र में भरे हुए जल-मिश्रित दूध में से जल को अलग करके दूध को हंस किस तरह पी लेता है। अध्यापक लांगमैन की परीक्षा से तो यह बात सिद्ध नहीं हुई।

अमेरिका के एक और विद्वान् ने हंस के नीर-क्षीर-विषयक प्रवाद का विचार किया है। आपका नाम है डाक्टर काब्मस। आप वाशिंगटन में रहते हैं। आपका मत कि हंस के मुँह की बनावट ऐसी है कि जब वह कोई चीज खाता है, तब उसका रस-मय पतला अंश उसके मुँह से बाहर गिर पड़ता है और कड़ा

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अंश पेट में चला जाता है। आपके मत में दूध से मतलब इसी कड़े अंश से है! बहुत रसीली चीज के कठोर अंश का बाहर वह आना सम्भव जरूर है, पर किसी चीज के कठोर अंश का अर्थ दूध करना हास्यास्पद है।

अच्छा हंस रहते कहाँ हैं और खाते क्या हैं? हंस बहुत करके इसी देश में पाये जाते हैं। उसका सबसे प्रिय निवासस्थान मानसरोवर है। यह सरोवर हिमालय पर्वत के ऊपर है। सुनते हैं, यह तालाब बहुत सुन्दर है। इसका जल मोती के समान निर्मल है। यहीं हंस अधिकता से रहते हैं और यहीं वे अंडे देते हैं। जाड़ा आरम्भ होते ही, शीताधिक्य के कारण, मानसरोवर छोड़ करके नीचे चले आते हैं, पर विन्ध्याचल के आगे वे नहीं बढ़ते। विन्ध्य और हिमालय के बीच ही में निर्मल जलराशि-पूर्ण तालाबों और नदियों के किनारे वे रहते हैं। चैत्र-वैशाख में वे हिमालय की तरफ चले जाते हैं। जिन जलाशयों में कमलों की अधिकता होती है, वे हंसों को अधिक प्रिय होते हैं। वहीं वे अधिक रहते हैं। उनके शरीर का रंग सफेद होता है और उनके पैर लाल होते हैं, चोंच का रंग भी लाल होता है, डील-डौल उनका बतक से कुछ बड़ा होता है।

यदि हंस दूध पीते हैं, तो दूध उनको मिलता कहाँ से है? मानसरोवर में उन्होंने गायें या भैंसें तो पाल नहीं रक्खीं और न हिन्दुस्तान ही के किसी तालाब या नदी में उनके दूध पीने की कोई सम्भावना हैं! इससे गाय भैंस का दूध पीना हंसो के लिए असम्भव-सा जान पड़ता है। कोई-कोई कवि-जन कहते हैं कि हंस मोती चुगते हैं। पर मोती भी मानसरोवर में नहीं पैदा होते। यदि उसमें मोतियों का पैदा होना मान भी लिया जाय तो हिन्दुस्तान के तालाबों में, जहाँ वे कुछ दिन रहते हैं, मोतियों का पैदा होना आज तक नहीं सुना गया। हाँ, एक बार हमने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कहीं पढ़ा था कि पंजाब, या राजपूताने की किसी झील में कुछ शुक्तियाँ ऐसी मिली थीं जिनमें मोती थे, पर क्या जितने हंस मानसरोवर छोड़ कर नीचे आते हैं वे सिर्फ उसी झील में जाकर रहते और मोती चुगते हैं? वहाँ भी यदि मोती बिखरे हुए पड़े हों, तभी उन्हें हंस-गण आसानी से चुगेंगे? पर यदि वे शुक्तियों के भीतर ही रहते हों तो उनको फोड़ कर मोती निकालना हंसों के लिए जरा कठिन काम होगा। पर इन सम्भावनाओं का कुछ अर्थ नहीं। निर्मल जल की उपमा मोती से दी जाती है और मानसरोवर का जल अत्यन्त निर्मल है। इससे उसके मोती सदृश निर्मल जल की उपमा मोती से देते-देते लोगों ने जल को ही मोती मान लिया हो तो कोई आश्चर्य नहीं। अतएव—"की हंसा मोती चुगैं की भूखे रह जायँ" आदि में मोती चुगने से मतलब मोती के समान निर्मल जल पीने से जान पड़ता है। यह पीने की बात हुई। अन्न खाने की बात का विचार कीजिये। नैषधचरित के पहले सर्ग में लिखा है कि राजा नल ने एक हंस पकड़ा। हंस आदमी की बोली बोलता था। उसने राजा से कहा—"फलेन मूलेन च वारिभूरुहो मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः।" अर्थात् पानी में पैदा होने वाले पौधों और बेलों के फलों और कन्दों से मैं मुनियों के समान अपना जीवननिर्वाह करता हूँ। भामिनी-विलास में जगन्नाथ राय ने हंस की एक अन्योक्ति कही है, यथा—

भुक्ता मृणालपटली भवता निपीता-
न्यम्बूनि यत्र नलिनानि निषेवितानि।
रे राजहंस! वद तस्य सरोवरस्य
कृत्येन केन भवितासि कृतोपकारः?

रे राजहंस, जिसके आश्रय में रह कर तू ने मृणालदण्डों को खाया, जल-पान किया, और नलिनों का स्वाद लिया उस सरोवर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



का तू किस प्रकार प्रत्युपकार करेगा ? मेघदूत में कालिदास कहते हैं—

आकैलाशाद् बिसकिसलयच्छेदपाथेयवन्तः ।
सम्पत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसाः सहायाः ॥

अर्थात् बिस और किसलय रूपी पाथेय ( रास्ते में खाने-पीने की सामग्री ) लेने वाले राजहंस आकाश में, कैलास पर्वत से आप ( मेघ ) के साथी या सहायक होंगे। विक्रमोर्वशी में भी कालिदास एक जगह कहते हैं—

सुरा नाकर्षति खण्डिताग्रात सूत्रं मृणालादिव राजहंसी ।

अर्थात यह सुरांगना ( मेरा मन शरीर से उसी तरह ) खींच रही है, जिस तरह राजहंसी मृणाल से सूत्र खींचता है। इन अवतरणों से प्रकट है कि हंस चाहे मोती चुगते और दूध पीते ही क्यों न हों; पर वे पानी भी पीते हैं और जलरुह पौधों के फल-फूल, मूल, नाल, मृणाल और बिसतन्तु भी खाते हैं। हंसों को जलपूर्ण जलाशयों में रहना अधिक पसन्द है। वहाँ उनके खाने की सामग्री, विशेष करके मृणालदंड, उनके भीतर के बिस-तन्तु और उनसे निकलने वाला रस है। कमल-नाल को तोड़ने से उसके भीतर से सफेद-सफेद सूत-सी एक चीज निकलती है उसी को बिस-तन्तु कहते हैं। सुनते हैं, उसे हंस बहुत खाते हैं। मृणाल-दंड की गाँठों से एक तरह का रस भी निकलता है, वह पतले दूध की तरह सफेद होता है। उसमें कुछ मीठापन भी होता है। उस रस का भी नाम क्षीर है। पेड़ों से निकलने वाले पानी के सदृश सफेद रङ्ग के प्रायः सभी प्रवाही पदार्थों का नाम क्षीर है। यहाँ तक कि गूलर, बरगद, थूहड़ और मदार तक से निकलने वाली सफेद चीज़ को हम लोग दूध ही कहते हैं। मृणाल-दण्ड पानी में रहते हैं। उन्हीं के भीतर से क्षीर-तुल्य सफेद रस निकलता है। उसी रस को हंस पीते या खाते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



हैं। अतएव, इस तरह, पानी के भीतर से निकाल कर हंसों का दूध पीना जरूर सिद्ध है। अनुमान होता है कि आरंभ में इसी प्रकार के नीर-क्षीर के पृथक्त्व से पंडितों का मतलब रहा होगा। धीरे-धीरे लोग वह बात भूल गये। उनकी यह समझ हो गई कि मामूली जल-मिश्रित दूध से हंस जल को पृथक् कर देते हैं और जल को छोड़ कर दूध भर पी जाते हैं।

---

## ८—कवियों की उर्मिला-विषयक उदासीनता

कवि स्वभाव ही से उच्छृङ्खल होते हैं। वे जिस तरफ झुक गये, झुक गये। जी में आया तो राई का पर्वत कर दिया; जी में न आया तो हिमालय की तरफ भी आँख उठा कर न देखा। यह उच्छृङ्खलता या उदासीनता सर्व-साधारण कवियों में तो देखी ही जाती है, आदि कवि तक इससे नहीं बचे। क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक पक्षी को निषाद द्वारा बध किया गया देख जिस कवि-शिरोमणि का हृदय दुःख से विदीर्ण हो गया, और जिसके मुख से "मा निषाद" इत्यादि सरस्वती सहसा निकल पड़ी वहीं पर दुःख-कातर मुनि, रामायण निर्म्माण करते समय, एक नवपरिणीता दुःखिनी वधू को बिल्कुल ही भूल गया। विपत्ति-विधुरा होने पर उसके साथ अल्पादल्पतरा समवेदना तक उसने प्रकट न की—उसकी खबर तक न ली।

वाल्मीकि रामायण का पाठ किंवा पारायण करने वालों को उर्मिला के दर्शन सबसे पहले जनकपुर में सीता, माण्डवी और श्रुति-कीर्ति के साथ होते हैं। सीता की बात तो जाने ही दीजिए। उनके और उनके जिविताधार रामचन्द्र के चरित्रचित्रण ही के लिए रामायण की रचना हुई है। माण्डवी और श्रुति कीर्ति के विषय में कोई विशेषता नहीं, क्योंकि आग से भी

६

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अधिक सन्ताप पैदा करने वाला पति-वियोग। उनको हुआ ही नहीं। रही बाल-वियोगिनी देवी उर्मिला, सो उसका चरित्र सर्वथा गेय और आलेख्य होने पर भी, कवि ने उनके साथ अन्याय किया। मुने! इस देवी की इतनी उपेक्षा क्यों? इस सर्वसुखवंचिता के विषय में इतना पक्षपात-कार्पण्य क्यों? क्या इसलिए कि इसका नाम इतना श्रुतिसुखद, इतना मंजुल, इतना मधुर है और तापसजनों का शरीर सदैव शीतातप सहने के कारण कठोर और कर्कश होता है--पर नहीं, आपका काव्य पढ़ने से तो यही जान पड़ता है कि आप कठोरता प्रेमी नहीं। भवतु नाम। हम इस उपेक्षा का एक मात्र कारण भगवती उर्मिला का भाग्यदोष ही समझते हैं। "हा हतविधिलसते! परमकारुणिकेन मुनिना वाल्मीकिनापि विस्मृतासि।"

हाय वाल्मीकि! जनकपुर में तुम उर्मिला का सिर्फ एक बार, वैवाहिक-वधू-वेश में, दिखा कर चुप हो बैठे। अयोध्या आने पर सुसराल में उसकी सुधि यदि आपको न आई थी तो न सही पर क्या लक्ष्मण के वन-प्रयाण-समय में भी उसके दुःखाश्रुमोचन करना आपको उचित न जँचा? रामचन्द्र के राज्याभिषेक की जब तैयारियाँ हो रही थीं, जब राजान्तःपुर ही क्या, सारा नगर नंदन-वन बन रहा था, उस समय नवला उर्मिला कितनी खुशी मना रही थी, सो क्या आपने नहीं देखा? अपने पति के परमाराध्य राम को राज्य-सिंहासन पर आसीन देख उर्मिला को कितना आनंद होता, इसका अनुमान क्या आपने नहीं किया? हाय! वही उर्मिला एक घण्टे बाद, राम-जानकी के साथ, निज पति को १४ वर्ष के लिए बन जाते हुए देख, छिन्नमूल शाखा की तरह राज-सदन की एक एकान्त कोठरी में भूमि पर लोटती हुई क्या आपके नयनगोचर नहीं हुई? फिर भी उसके लिए आपकी "वचने

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



दरिद्रता" उर्मिला वैदेही की छोटी बहिन थी। सो उसे बहिन का वियोग सहना पड़ा और प्राणाधार पति का भी वियोग सहना पड़ा। पर इतनी घोर दुःखिनी होने पर भी आपने दया न दिखाई। चलते समय लक्ष्मण को उसे एक बार आँख भर देख भी न लेने दिया! जिस दिन राम और लक्ष्मण, सीतादेवी के साथ, चलने लगे—जिस दिन उन्होंने अपने पुरत्याग से अयोध्या नगरी को अन्धकार में, नगरवासियों को दुःखोदधि में और पिता को मृत्यु-मुख में निपतित किया, उस दिन भी आपको उर्मिला याद न आई। उसकी क्या दशा थी, वह कहाँ पड़ी थी, सो कुछ भी आपने न सोचा, इतनी उपेक्षा!

लक्ष्मण ने अकृत्रिम भ्रातृस्नेह के कारण बड़े भाई का साथ दिया। उन्होंने राज-पाट छोड़ कर अपना शरीर रामचन्द्र को अर्पण किया। यह बहुत बड़ी बात की। पर उर्मिला ने इससे भी बढ़ कर आत्मोत्सर्ग किया। उसने अपनी आत्मा की अपेक्षा भी अधिक प्यारा अपना पति राम-जानकी के लिए दे डाला और यह आत्मसुखोत्सर्ग उसने तब किया जब उसे व्याह कर आये हुए कुछ ही समय हुआ था। उसने अपने सांसारिक सुख के सब से अच्छे अंश से हाथ धो डाला। जो सुख विवाहोत्तर उसे मिलता उसकी बराबरी १४ वर्ष पति-वियोग के बाद का सुख कभी नहीं कर सकता। नवोढ़त्व को प्राप्त होते ही जिस उर्मिला ने, रामचन्द्र और जानकी के लिए, अपने सुख सर्वस्व पर पानी डाल दिया उसी के लिए अन्तर्दर्शी आदि कवि के शब्द-भण्डार में दरिद्रता!

पति-प्रेम और पति-पूजा की शिक्षा सीतादेवी को जहाँ मिली थी वहीं उर्मिला को भी मिली थी। सीतादेवी की सम्मति

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते।
पिय बिनु तियहिं तरनि ते ताते॥

उर्मिला की क्या यह भावना न थी? जरूर थी। दोनों एक ही घर

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



की थीं। उर्मिला भी पतिपरायणता-धर्म्म को अच्छी तरह जानती थी। पर उसने लक्ष्मण के साथ वन-गमन की हठ, जान-बूझ कर नहीं की। यदि वह भी साथ जाने को तैयार होती, तो लक्ष्मण को अपने अग्रज राम के साथ उसे ले जाने में संकोच होता और उर्मिला के कारण लक्ष्मण अपने उस आराध्य-युग्म की सेवा भी अच्छी तरह न कर सकते। यही सोच उर्मिला ने सीता का अनुकरण नहीं किया। यह बात उसके चरित्र की बहुत बड़ी महत्ता का बोधक है। वाल्मीकि को ऐसी उच्चाशय रमणी का विस्मरण होते देख किस कविता-मर्मज्ञ को आन्तरिक वेदना न होगी ?

तुलसीदासजी ने भी उर्मिला पर अन्याय किया है। आपने इस विषय में आदि कवि का ही अनुकरण किया है। "नानापुराण-निगमागमसम्मत" लेकर जब रामचरित-मानस की रचना करने की घोषणा की थी, तब यहाँ पर आदि काव्य को ही अपने वचनों का आधार मानने की वैसी कोई जरूरत न थी आपने भी चलते वक्त लक्ष्मण को उर्मिला से नहीं मिलने दिया। माता से मिलने के बाद, झट कह दिया——

गये लषण जहँ जानकिनाथा।

आपके इष्टदेव के अनन्य सेवक 'लषण' पर इतनी सख्ती क्यों ? अपने कमण्डलु के करुणावारि का एक बून्द आपने उर्मिला के लिए न रक्खा। सारा का सारा कमण्डलु सीता को समर्पण कर दिया। एक ही चौपाई में उर्मिला की दशा का वर्णन कर देते। अथवा उसी के मुँह से कुछ कहलाते। पाठक सुन तो लेते कि राम-जानकी के वनवास और अपने पति के वियोग के सम्बन्ध में क्या-क्या भावनायें उसके कोमल हृदय में उत्पन्न हुई थीं। उर्मिला को जनकपुर से साकेत पहुँचा कर उसे एक दम ही भूल जाना अच्छा नहीं हुआ।

हाँ, भवभूति ने इस विषय में कुछ कृपा की है। राम-लक्ष्मण

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:


और जानकी के वन लौट आने पर भवभूति को बेचारी उर्मिला एक बार याद आ गई है। चित्र-फलक पर उर्मिला को देख कर सीता ने लक्ष्मण से पूछा—"इयमप्यपरा का ?" अर्थात् लक्ष्मण कौन है ? इस प्रकार देवर से पूछना कौतुक से खाली नहीं। इसमें सरसता है। लक्ष्मण इस बात को समझ गये। वे कुछ लज्जित होकर मन ही मन कहने लगे—उर्मिला को सीता देवी पूछ रही हैं। उन्होंने सीता के प्रश्न का उत्तर दिये बिना ही उर्मिला के चित्र पर हाथ रख दिया। उनके हाथ से वह ढक गया। कैसे खेद की बात है कि उर्मिला का उज्ज्वल चरित्र-चित्र कवियों के द्वारा भी आज तक इसी तरह ढकता आया।

---

## ९—नल का दुस्तर दूत कार्य

प्राचीन समय में भारत का अधिकतर अंश जिसे आजकल कुमाऊँ कहते हैं निषध देश के नाम से प्रसिद्ध था। अलका उसकी राजधानी थी। उसमें वीरसेन का पुत्र नल नामक एक महाप्रतापी राजा राज्य करता था।

नल, एक दिन मृगया के लिए राजधानी से बाहर निकला। आखेट करते-करते वह अकेला दूर तक अरण्य में निकल गया। वहाँ उसने एक बड़ा मनोहर जलाशय देखा। उसके तट पर एक अलौकिक रंग रूपधारी हंस, थक जाने के कारण, आँखें बंद किए, बैठा आराम कर रहा था। नल की दृष्टि उस पर पड़ी। चुपचाप, दबे पैरों, जाकर राजा ने उसे पकड़ लिया। हंस का विचरण-स्वातन्त्र्य जाता रहा। पराधीनता के दुख और अपनी स्त्री तथा माता के वियोग-जन्य ताप की चिन्ता से वह व्याकुल हो उठा। उसने बहुत विलाप किया। मुक्ति दान देने के लिये राजा से उसने प्रार्थना भी की और एक तुच्छ पक्षी पर अनुचित बल प्रयोग करने के लिए उसकी भर्त्सना भी की। राजा को दया आई, उसने उस हंस को छोड़ दिया।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



हंस इस पर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने कहा—मैं एक असाधारण पक्षी हूँ। आपने मुझे छोड़ दिया, इसका मैं प्रत्युपकार करना चाहता हूँ। आप अभी तक अविवाहित हैं अतएव आप ही के सदृश अलौकिक रूप-लावण्यवती सुन्दरी दमयन्ती को आप पर अनुरक्त कराने की मैं चेष्टा करूँगा। आपका कल्याण हो। मैं चला। अपने उद्योग की सफलता का संवाद सुनाने के लिए शीघ्र ही मैं लौट कर आपके दर्शन करूँगा।

नल से विदा होकर हंस ने विदर्भ देश——आधुनिक बरार——की राह ली। वहाँ के राजा भीम की कन्या दमयन्ती उस समय त्रिभुवन में एक ही सुन्दरी थी। उसकी रूपराशि का वर्णन करके हंस ने नल को दमयन्ती पर अनुरक्त किया था। अब दमयन्ती को नल पर अनुरक्त करना था। आकाश मार्ग से हंस शीघ्र ही विदर्भ देश की राजधानी कुण्डिनपुर पहुँचा। दमयन्ती उस समय अपने क्रीड़ा-स्थान में सखियों के साथ खेल रही थी। हंस मनुष्य की बोली बोलना जानता था। एकान्त में नल के सौन्दर्य, बल-वैभव और पराक्रम आदि का वर्णन दमयन्ती को सुना कर हंस ने उसे नल के प्रेमपाश में फाँस लिया। यही नहीं, उसने दमयन्ती से यह वचन तक ले लिया कि मर चाहे जाऊँ पर नल को छोड़ कर और किसी से विवाह न करूँगी।

यह सुख-समाचार नल को सुना कर हंस अपने आवास को चला गया। इधर नल की चिन्तना ने दमयन्ती को अतिशय सन्तप्त कर दिया। एक दिन विरह-व्यथा से अत्यन्त व्यथित होकर वह मूर्छित हो गई। पिता भीम उसके पास दौड़े आये। कन्या की दशा देख कर उसके सन्ताप का कारण वे ताड़ गये। उन्होंने शीघ्र ही उसका विवाह कर डालना चाहा। स्वयंवर की तिथि निश्चित हुई।

स्वयंवर में शरीक होने के लिए देश-देश के नरेश चले। नल ने भी अलका से कुण्डिनपुर के लिए प्रस्थान किया। उधर नारद

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



से स्वयंवर का समाचार और भैमी का सौंदर्य-वर्णन सुन कर उसे पाने की इच्छा से, इन्द्र ने भी देवलोक से प्रस्थान किया। उसके पीछे यम, वरुण और अग्नि भी चले। मार्ग में उन चारों की भेंट नल से हुई। नल की भुवनातिव्यापिनी सुन्दरता देख कर उन देवताओं के होश उड़ गये। उन्होंने इस बात को निश्चित समझा कि नल के होते दमयन्ती कदापि उनके कण्ठ में वरमाला न पहनायेगी। अतएव, कपट कौशल की ठहरी। नल की दान-शूरता आदि की प्रशंसा करके इन्द्र महाराज नल के याचक बने। आपने नल से याचना की कि तुम हमारे दूत बन कर दमयन्ती के पास जाओ और हमारी तरफ से ऐसी वकालत करो, जिससे वह हमी चारों में से किसी एक को अपना पति बनाये।

इस प्रार्थना पर नल को महादुःख हुआ। उसे क्रोध भी हो आया। उसने इन्द्रादि के इस कार्य की बड़ी निन्दा की। अपना सच्चा हाल भी उसने कह सुनाया। संकल्प द्वारा मुझे ही दमयन्ती अपना पति बना चुकी है यह नल ने साफ-साफ कह दिया। भीम-भूपाल के अन्तःपुर में दूत बन कर जाने की असम्भवता का भी नल ने उल्लेख किया। पर इन्द्र ने एक न मानी। उस समय उसे उचित अनुचित का कुछ भी ध्यान न रहा। फिर उसने नल की चाटुकारिता आरम्भ की। आजिज आकर नल ने इन्द्रादि देवताओं का दूत बनकर दमयन्ती के पास जाना स्वीकार कर लिया। इन्द्र ने नल को एक ऐसी विद्या सिखला दी जिसके प्रभाव से, इच्छा करने पर, वह और लोगों की दृष्टि से अदृश्य हो सके पर वह सबको देखता रहे। नल इस तरह, इधर दूत बनकर कुण्डिनपुर पहुँचा। उधर पूर्वोक्त चारों दिक्पालों ने पृथक्-पृथक् अपनी दूतियाँ भी दमयन्ती के पास, उसे अपनी ओर अनुरक्त करने के लिए भेजीं। इतने छल-कपट और प्रयत्न को काफ़ी न समझ कर उन्होंने दमयन्ती के पिता को बहुत कुछ घूँस

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



भी दी। सबने अद्भुत-अद्भुत उपायन राजा भीम को भेजे।

नल ने अपना रथ, अपने अनुचर और अपना असबाब आदि कुण्डिनपुर के बाहर ही छोड़ा। दिक्पालों की स्वार्थपरता और निर्लज्जता को धिक्कारते हुए उसने नगर में प्रवेश किया। जी कड़ा करके वह राज-प्रासाद के पास पहुँचा। धीरे-धीरे वह उसके भीतर घुसा। इन्द्रदत्त तिरस्करिणी विद्या के प्रभाव से उसे किसी ने न देखा। घूमते-घामते वह दमयन्ती के महलों में दाखिल हुआ। कहीं किसी कामिनी के शरीर का स्पर्श होने से वह झिझक उठा। कहीं किसी का कोई अनावृत अङ्ग देख कर उसने आँखें मूँद लीं। किसी को अपने स्थिति-स्थान की ओर मुख किये देख वह डर उठा कि कहीं मैं देख तो नहीं लिया गया। इस प्रकार अन्तःपुर की सैर करते हुए वह दमयन्ती के सम्मुख उपस्थित हुआ। उसके रूप-माधुर्य की शोभा देखते वह देर तक वहाँ खड़ा रहा। उसने सबको देखा; उसे कोई न देख सका। तदनन्तर, समय अनुकूल देख, अङ्गीकृत दूतत्व निर्वाह के ईरादे से, वह प्रकट हो गया। इसके बाद वहाँ जो कुछ हुआ उसके वर्णन में श्रीहर्ष ने अपने नैषध-चरित में अपूर्व कवित्व-कौशल दिखाया है। उसी का भावार्थ संक्षेप में आगे दिया जाता है।

पाठकों को स्मरण रखना चाहिए कि नल और दमयन्ती दोनों, पहिले ही से, एक दूसरे पर अनुरक्त थे। तिस पर भी नल ने याचक इन्द्र की याञ्चा को विफल कर देना अपने वंश के विरुद्ध समझा। अतएव उसने दूत बनना स्वीकार कर लिया। नल के चरित्रदार्ढ्य, साहस और स्वार्थत्याग का यह अद्भुत उदाहरण है। अब, इस समय यह दोनों प्रेमी एक दूसरे के सामने हैं। नल से तो कोई बात छिपी नहीं, पर दमयन्ती को इसका अत्यल्प भी ज्ञान नहीं कि यह कौन है। इससे इस घटना की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



महत्ता बहुत बढ़ गई है—इसमें एक अनिर्वचनीय रस उत्पन्न हो गया है, अस्तु।

नल के अकस्मात् प्रकट होने पर दमयन्ती और उसकी सहेलियों ने उसे इस अनिमेष-भाव से देखा मानो वे उसे दृष्टि-द्वारा पी जाना चाहती हैं। नल को इस तरह कुछ देर तक देख चुकने पर, किसी-किसी कामिनी ने लाज से सिर नीचा कर लिया, किसी किसी ने उसके रूप-लावण्य के समुद्र में गोता लगाया। और, किसी-किसी ने उसे प्रत्यक्ष मन्मथ समझकर विस्मय की पराकाष्ठा के पार प्रयाण किया।

किसी को यह बात पूछने का साहस न हुआ कि—आप कौन हैं और कहाँ से आये हैं। नल के अपूर्व रूप और आकस्मिक प्रादुर्भाव ने उन्हें अप्रतिभ कर दिया। उनसे उस समय केवल यही बन पड़ा कि, अभ्युत्थान की वाञ्छा से, अपने-अपने आसनों से वे उठ खड़ी हुईं। नल के संदर्शन से दमयन्ती को वैसे ही परमानन्द प्राप्त हुआ जैसा कि वर्षा-काल आने पर पर्वत से निकली हुई नदी को मेघों के धारासार से प्राप्त होता है।

नल के प्रत्येक अङ्ग की सुन्दरता का मन ही मन अभिनन्दन करके दमयन्ती के हृदय में जिन भावों का उदय हुआ उनका वर्णन करने में केवल महाकवि ही समर्थ हो सकते हैं। दमयंती ने देखा कि उसकी सारी सहेलियाँ कुंठित-कण्ठ हो रही हैं। उनके मुखमंडलों पर आतङ्क छाया हुआ है। अतएव वे दमयंती की तरफ से उस आगन्तुक पुरुष से कुशल प्रश्न करने में असमर्थ हैं। लाचार नम्र-मुखी दमयन्ती स्वयं ही नल से इस प्रकार गद्गद् भाव-पूर्ण वाणी बोली—

"आचार्यवेत्ता महात्माओं ने वह नियम कर दिया है कि अतिथि आने पर यदि और कुछ न बन पड़े तो प्रेम-पूर्ण अक्षरों की रस-धारा ही को मधुपर्क बनाना चाहिए। अभ्यागत की तृप्ति के

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



लिए अपनी आत्मा को भी तृणवत् समझना चाहिए। और यदि, उस समय पाद्य और अर्घ्य के लिए जल न मिल सके तो आनन्दाश्रुओं ही से उस विधि का सम्पादन करना चाहिए। आपका दर्शन होते ही मैं अपना जो आसन छोड़ कर खड़ी हो गई वह यथार्थ में आपके बैठने योग्य नहीं, तथापि मेरी प्रार्थना पर बहुत नहीं तो क्षण ही भर के लिये, कृपा-पूर्वक, आप उसे अलंकृत करें। यदि आपकी इच्छा और कहीं जाने की हो तो भी मेरे अनुरोध से, आप मेरी इस विनती को मान लेने की उदारता दिखावें। आपके ये पद-द्वय शिरीषकलिकाओं की मृदुता का भी अभिमान चूर्ण करने वाले हैं। यह तो आप बताइए कि आपका निर्दय हृदय कब तक इन्हें, इस तरह खड़े रख कर क्लेशित करना चाहता है। बसन्त बीत जाने पर जो दशा उपवनों की होती है वही दशा आपने किस देश की कर डाली? आपके मुख से उच्चारण किए जाने के कारण कृतार्थ होने वाले आपके नाम के अक्षर सुनने के लिये मैं उत्सुक हो रही हूँ। अपने दर्शनों से सारे संसार को तृप्त करने वाले आप जैसे पियूषमुख ( चंद्रमा ) को उत्पन्न करके किस वंश ने समुद्र के साथ स्पर्द्धा करने का बीड़ा उठाया है? उस वंश का यह उद्योग सर्वथा स्तुत्य और उचित है। इस दुष्प्रवेश्य अन्तःपुर में आपके प्रवेश को मैं महासागर को पार कर जाना समझती हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि इतने बड़े साहस का कारण क्या है और इसका फल भी क्या हो सकता है? आपके इस सुरक्षित अंतःपुर-प्रवेश को मैं अपने नेत्रों के कृतपुण्य का फल समझती हूँ। आपकी आकृति सर्वथा भुवन-मोहिनी है। द्वारपालों को अन्धा कर डालने की शक्ति भी आप में बड़ी ही अद्भुत है। आपकी शरीर-कांति भी महा अलौकिक है। इससे जान पड़ता है कि आप कोई दिव्य पुरुष, अर्थात् देवता हैं। मन्मथ आप नहीं हो सकते, क्योंकि वह मूर्तिहीन है। अश्विनीकुमार भी आप नहीं हो सकते, क्योंकि वे

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कभी अद्वितीय नहीं देखे गए । यदि आप मनुष्य हैं तो यह पृथ्वी कृतार्थ है। यदि आप देवता हैं तो देवलोक की प्रशंसा नहीं हो सकती। यदि आपने अपने जन्म से नाग-वंश को अलंकृत किया है तो नीचे, अर्थात पाताल में होने पर वह सब लोकों के ऊपर समझा जाने योग्य है। इस भूमण्डल में किस मनुष्य ने इतना अधिक पुण्य संपादन किया है जिसे कृतकृत्य करने के उद्देश्य से आप अपने पैरों को चलने का कष्ट दे रहे हैं? इस प्रकार के न मालूम कितने सन्देह मेरे चित्त में उत्पन्न हो रहे हैं। अतएव आप अधिक देर तक मुझे सन्देह-सागर में न डुबोइये। बतला दीजिए कि किस धन्य के आप अतिथि हैं। आपके सुंदर रूप का दर्शन करके मेरी दृष्टि ने तो अपने जन्म का फल पा लिया। यदि आप अपने मुख से अब कुछ कहने की कृपा करें तो मेरे कानों को भी सुधासार के आस्वादन का आनन्द मिल जाय।"

अपनी प्रियतमा के मुख से इस तरह शहद के समान मीठी वाणी सुनने से नल का अजीब हाल हुआ। दमयन्ती के ओष्ठ-बन्धूकरूपी धन्वा से, वाणी के बहाने निकली हुई मन्मथ की पञ्च-वाणी ( पाँच वाण ) कानों की राह से नल के हृदय के भीतर धँस गई। प्रिया दमयन्ती के मुख से ऐसे मधुर और ऐसे प्यारे वचन सुन कर नल, सुधा-समुद्र में, शरीरान्तर्वर्त्तिनी मज्जापर्य्यन्त निमज्जित हो गया। स्तुति ऐसी चीज है जो शत्रु के भी मुँह से मीठी मालूम होती है। फिर प्राणोपम प्रिय के मुँह से उसके मिठास का कहना ही क्या है।

नल ने स्वयं दमयन्ती के आसन पर बैठना तो उचित न समझा। पर दमयन्ती की प्रार्थना पर उसकी सखी के आसन पर वह बैठ गया। इस समय नल के हृदयगत धैर्य्य और मनोभाव में युद्ध ठन गया। जीत धैर्य्य ही की हुई। मनोभाव ने हार खाई। उसकी एक न चली। विकारों की उत्पादक प्रबल सामग्री के उप-

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



लिए अपनी आत्मा को भी तृणवत् समझना चाहिए। और यदि, उस समय पाद्य और अर्घ्य के लिए जल न मिल सके तो आनन्दाश्रुओं ही से उस विधि का सम्पादन करना चाहिए। आपका दर्शन होते ही मैं अपना जो आसन छोड़ कर खड़ी हो गई वह यथार्थ में आपके बैठने योग्य नहीं, तथापि मेरी प्रार्थना पर बहुत नहीं तो क्षण ही भर के लिये, कृपा-पूर्वक, आप उसे अलंकृत करें। यदि आपकी इच्छा और कहीं जाने की हो तो भी मेरे अनुरोध से, आप मेरी इस विनती को मान लेने की उदारता दिखावें। आपके ये पद-द्वय शिरीषकलिकाओं की मृदुता का भी अभिमान चूर्ण करने वाले हैं। यह तो आप बताइए कि आपका निर्दय हृदय कब तक इन्हें, इस तरह खड़े रख कर क्लेशित करना चाहता है। बसन्त बीत जाने पर जो दशा उपवनों की होती है वही दशा आपने किस देश की कर डाली? आपके मुख से उच्चारण किए जाने के कारण कृतार्थ होने वाले आपके नाम के अक्षर सुनने के लिये मैं उत्सुक हो रही हूँ। अपने दर्शनों से सारे संसार को तृप्त करने वाले आप जैसे पियूषमुख ( चंद्रमा ) को उत्पन्न करके किस वंश ने समुद्र के साथ स्पर्द्धा करने का बीड़ा उठाया है? उस वंश का यह उद्योग सर्वथा स्तुत्य और उचित है। इस दुष्प्रवेश्य अन्तःपुर में आपके प्रवेश को मैं महासागर को पार कर जाना समझती हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि इतने बड़े साहस का कारण क्या है और इसका फल भी क्या हो सकता है? आपके इस सुरक्षित अंतःपुर-प्रवेश को मैं अपने नेत्रों के कृतपुण्य का फल समझती हूँ। आपकी आकृति सर्वथा भुवन-मोहिनी है। द्वारपालों को अन्धा कर डालने की शक्ति भी आप में बड़ी ही अद्भुत है। आपकी शरीर-कांति भी महा अलौकिक है। इससे जान पड़ता है कि आप कोई दिव्य पुरुष, अर्थात् देवता हैं। मन्मथ आप नहीं हो सकते, क्योंकि वह मूर्तिहीन है। अश्विनीकुमार भी आप नहीं हो सकते, क्योंकि वे

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कभी अद्वितीय नहीं देखे गए। यदि आप मनुष्य हैं तो यह पृथ्वी कृतार्थ है। यदि आप देवता हैं तो देवलोक की प्रशंसा नहीं हो सकती। यदि आपने अपने जन्म से नाग-वंश को अलंकृत किया है तो नीचे, अर्थात पाताल में होने पर वह सब लोकों के ऊपर समझा जाने योग्य है। इस भूमण्डल में किस मनुष्य ने इतना अधिक पुण्य संपादन किया है जिसे कृतकृत्य करने के उद्देश्य से आप अपने पैरों को चलने का कष्ट दे रहे हैं? इस प्रकार के न मालूम कितने सन्देह मेरे चित्त में उत्पन्न हो रहे हैं। अतएव आप अधिक देर तक मुझे सन्देह-सागर में न डुबोइये। बतला दीजिए कि किस धन्य के आप अतिथि हैं। आपके सुंदर रूप का दर्शन करके मेरी दृष्टि ने तो अपने जन्म का फल पा लिया। यदि आप अपने मुख से अब कुछ कहने की कृपा करें तो मेरे कानों को भी सुधासार के आस्वादन का आनन्द मिल जाय।"

अपनी प्रियतमा के मुख से इस तरह शहद के समान मीठी वाणी सुनने से नल का अजीब हाल हुआ। दमयन्ती के ओष्ठ-बन्धूकरूपी धन्वा से, वाणी के बहाने निकली हुई मन्मथ की पञ्च-वाणी (पाँच वाण) कानों की राह से नल के हृदय के भीतर धँस गई। प्रिया दमयन्ती के मुख से ऐसे मधुर और ऐसे प्यारे वचन सुन कर नल, सुधा-समुद्र में, शरीरान्तर्वर्त्तिनी मज्जापर्य्यन्त निमज्जित हो गया। स्तुति ऐसी चीज है जो शत्रु के भी मुँह से मीठी मालूम होती है। फिर प्राणोपम प्रिय के मुँह से उसके मिठास का कहना ही क्या है।

नल ने स्वयं दमयन्ती के आसन पर बैठना तो उचित न समझा। पर दमयन्ती की प्रार्थना पर उसकी सखी के आसन पर वह बैठ गया। इस समय नल के हृदयगत धैर्य्य और मनोभाव में युद्ध ठन गया। जीत धैर्य्य ही की हुई। मनोभाव ने हार खाई। सकी एक न चली। विकारों की उत्पादक प्रबल सामग्री के उप-

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



स्थित होने पर भी यदि महात्माओं का मन कलुषित हो जाय तो फिर वे महात्मा ही कैसे—

दमयन्ती ने नल से जो प्रश्न किए उनमें से एक को छोड़कर और सब प्रश्न नल हजम कर गये। आपने अपनी कथा का आरम्भ इस प्रकार किया—

मैं दिशाओं के अधिपतियों की सभा से तुम्हारे ही पास अतिथि होकर आया हूँ। साथ ही अपने प्रभुओं के सन्देश, बड़े आदर के साथ, अपने हृदय में प्राणों की तरह धारण करके लाया हूँ। मेरा आतिथ्य-सत्कार हो चुका। बस, अब और अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। बैठ क्यों नहीं जातीं? आसन क्यों छोड़ दिया? दूत बन कर मैं जिस काम के लिए आया हूँ उसे यदि तुम सफल कर दोगी तो मैं उसी को अपना बहुत बड़ा आतिथ्य समझूँगा। हे कल्याणि! चित्त तो तुम्हारा प्रसन्न है? शरीर तो सुखी है? विलम्ब करने का यह समय नहीं। इससे जो कुछ मैं निवेदन करने जाता हूँ उसे कृपा करके सुनो। मेरा निवेदन यह है।

जब से तुम्हारी कुमारावस्था का आरम्भ हुआ तभी से तुम्हारे गुणों ने इन्द्र, वरुण, यम, कुबेर के हृदय पर अधिकार कर लिया है। तुम्हारे शैशव और यौवन की सन्धि से सम्बन्ध रखने वाली बातों का विचार करके इन दिक्पालों का चित्त प्रतिदिन अधिकाधिक खिन्न हो रहा है। दो राजों के राज्य में जो दशा प्रजा की होती है वही दशा इस समय इन देवताओं की हो रही है। पञ्चशायकरूपी चोर ने इनके धैर्य्यरूपी सारे धन का अपहरण कर लिया है।

मैं तुमसे इन्द्र का क्या हाल बयान करूँ! सूर्य्य जिस समय पूर्व दिशा में उदित होता है उस समय उसका बिम्ब वैसा ही अरुण होता है जैसा कि चन्द्रमा का। तुम्हारे वियोग में महेन्द्र सूर्य्य को

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



भी, सदृश्यता के कारण, चन्द्रमा समझ कर अत्यन्त क्रोध-पूर्ण दृष्टि से देखता है। किसका अपराध और किस पर क्रोध। परन्तु वह बेचारा करे क्या ? वह इस समय बिल्कुल ही विवेकहीन हो रहा है। केवल तीन नेत्र-धारी ने मनोज महोदय के साथ जो सुलूक किया था उसी को वह अब तक नहीं संभाल सका। मेरी समझ में नहीं आती कि यदि अब सहस्रनेत्रधारी उस पर रुष्ट हुआ तो उस बेचारे की क्या दशा होगी ? मनसिज के तो शरीर-कृत अपराधों से शचीपति सन्तप्त हो रहा है कोकिल का तो वचन-कृत अपराध भी उसे सहन नहीं होता। इस डर से कि कहीं पिक का शब्द कान में न पढ़ जाय वह अपने नंदन-बन में जाकर बैठने का साहस भी नहीं कर सकता। और कहाँ तक कहूँ, शंकर के जटाजूट वाले बाल-चन्द्रमा को अपना अपकारकर्ता समझ कर उसने महादेव का पूजन तक करना छोड़ दिया। तुम्हारे वियोग में उसके धैर्य्य का समूल उन्मूलन हो गया है। कल्पवृक्ष संसार के दारिद्र-हरण का सामर्थ्य रखते हैं। परन्तु इस समय वे स्वयं ही महादरिद्री हो रहे हैं। इन्द्र के शरीर का सन्ताप दूर करने के उनके पत्तों की शय्यायें बना डाली गई हैं। अतएव वे सब बेपते के दारिद्र-दीन खड़े हुए हैं। तुम शायद यह शंका करो कि क्या अमर-पुर में कोई ऐसा पंडित नहीं जो अपने सदुपदेश से इन्द्र को धैर्य्य-प्रदान करे। शंका तुम्हारी निर्मूल नहीं। परन्तु उपदेश सुने कौन ? रतिपति के धन्वा की अविरत टंका ने इन्द्र को दोनों कानों से बहरा कर डाला है। अतएव महेन्द्र की मोह-निद्रा दूर करनेवाले सुर-गुरु बृहस्पति की धैर्य्य-विधायक वाणी सर्वथा व्यर्थ हो रही है।

अष्टमूर्ति शङ्कर का जो देदीप्यमान शरीर है और याचक जिसकी नित्य उपासना करते हैं उस अग्नि का भी बुरा हाल है। कुसुम-शायक ने उसे भी तुम्हारा दास बनने की आज्ञा दे दी है। दूसरों को जलाते समय अग्नि अब तक यह न जानता था कि उन्हें कितना

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



ताप होता है—उन्हें जितनी जलन होती है। परन्तु तुम्हारी सहायता से अग्नि को जला कर इस समय अनङ्ग उसे यहाँ तक विनीत और विनम्र बना रहा है कि भविष्यत् में दूसरों को संतोष देने का उसे कदापि साहस न होगा। क्योंकि, अब उसे जलने का दुःख अच्छी तरह ज्ञात हो गया है। शङ्कर के तीसरे नेत्र में वास करने वाले पावक ने मनसिज को एक बार जला कर भस्म कर दिया था। इस बात को तुमने भी पुराणों में सुना होगा। सो वह पुराना बदला लेने के लिए इस समय मनोज ने तुम्हारे नेत्रों का सहारा लिया है। उन्हीं के भीतर सुरक्षित बैठा हुआ वह अग्नि को जला रहा है। उसका यह कठोर कार्य बहुत दिन से जारी है। तथापि वह यही समझ रहा है कि अभी तक उस वैर-भाव का काफी बदला नहीं हुआ। तुम्हारे कारण कुसुमायुध के शरों से अग्नि यहाँ तक पीड़ित हो गया है कि अपने भक्तों के द्वारा चढ़ाये गए कुसुमों से भी डर कर वह कोसों दूर भागता है।

सरोरुहों का सखा सूर्य जिससे पुत्रवान है और चन्दन के सुवास से सुगन्धित दक्षिण दिशा जिसकी प्रियतमा है उस वैवस्वत यम ने भी तुम्हारे निमित्त कामाग्नि-कुण्ड में अपने धैर्य की आहुति दे डाली है। वह भी इस समय बड़ी ही विषमावस्था को प्राप्त है। शीतोपचार के लिए मलयाचल से लाये गये, कोमल पल्लव उसके शरीर-स्पर्श से यद्यपि बेतरह झुलस जाते हैं तथापि मलय इस आपत्तिकाल में भी अपने प्रभु यम की सेवा नहीं छोड़ता। कारण यह कि वह उसी दिशा का—उसी के राज्य का वासी है। अतएव यम के शरीर के साथ मलयाद्रि भी अपने नवल-पल्लव और चन्दनादि जलाने का सन्ताप सहन कर रहा है।

रहा वरुण, सो उसकी भी दशा अच्छी नहीं। महासागर युगायुग से बड़वाग्नि की ज्वाला सहन करता चला आ रहा है। वह उसे विशेष दाहक नहीं जान पड़ती। परन्तु अपने ही अधि-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



पति वरुण का स्मराग्नि-सन्तप्त शरीर जल के भीतर धारण करने में वह इस समय असमर्थ हो रहा है।

ये चारों देवता तुम्हारे नगर के बाहर पास ही ठहरे हुए हैं। उन्हीं की आज्ञा से मैं तुम्हारी सेवा में उपस्थित हुआ हूँ। जो कुछ मैंने तुमसे निवेदन किया वह उन्ही का संदेश है। अब कृपा करके बतलाओ कि उन्हें अपनी इच्छा पूर्ति के लिये कब तक ठहरना पड़ेगा। उनके जीवन संशयापन्न हैं। अतएव जहाँ तक हो सके तुम्हें शीघ्रता करनी चाहिए। तुम प्रतिदिन इन देवताओं की पूजा, कमल के फूलों से, करती हो। परन्तु इस तरह की पूजा ये नहीं चाहते। वह इनको प्रीतिकर नहीं। तुम्हें प्रसन्न करने के लिए ये तो स्वयं ही अपना मस्तक तुम्हारे सामने झुका रहे हैं। अतएव अपने चरण-कमलों से तुम इनकी पूजा करो; प्राकृतिक कमल-फूलों से नहीं। अब क्या आज्ञा है?

नल के मुख से दिक्पालों का संदेश सुनते समय दमयन्ती की भौंह टेढ़ी और आँखें लाल हो रही थीं। आँखें और भौंहों के विकार-विभ्रम से वह यह सूचित कर रही थी कि देवताओं से सम्बंध रखनेवाली अपनी अनिच्छा को साफ-साफ कह कर प्रकट करने के लिए मैं उत्सुक हो रही हूँ। यहाँ पर पाठक यह कह सकते हैं कि नल के संदेश-वाक्य यदि भैमी को इतनी अप्रिय मालूम होते थे तो उसने नल को बीच ही में क्यों न रोक दिया? क्यों उसकी सारी बातें वह अन्त तक सुनती रही? इसका कारण यह न था कि दमयन्ती उस सन्देश को कोई गौरव की चीज समझती थी। नहीं, वह सन्देश उसकी दृष्टि में बिलकुल ही तुच्छ था। नल को जो उसने बीच ही में नहीं रोक दिया, इसका कारण यह था कि नल के संदेश-कथन का ढंग बहुत ही अनोखा था। उसकी उक्तियाँ बड़ी ही मनोहारिणी थीं। उसकी वाणी बहुत ही रसवती थी। इसी से उक्ति-श्रवण के लोभ में पड़

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कर, अन्त तक दमयन्ती उसकी बातें सुनती रही। सुना तो उसने सब, पर उसका कुछ भी असर उस पर न हुआ। नल के कथित संदेश को बिल्कुल ही अनसुना-सा करके उसने इस प्रकार कहना आरम्भ किया—

आप तो बड़े ही विचित्र जीव मालूम होते हैं। मैंने आपसे आपका नाम पूछा; आपका वंश पूछा; आपका स्थान पूछा। पर मेरे इन प्रश्नों का कुछ भी उत्तर न देकर, न मालूम, आपने क्या-क्या अनाप-शनाप कह डाला। मुझे अपने कई प्रश्नों का उत्तर आपसे पाना है। इस कारण, इस विषय में आप मेरे ऋणी हैं। क्या यह आपके लिए लज्जा की बात नहीं ? अपना पहिला कर्ज न चुका कर, किस नैतिक नियम के अनुसार, आप मुझसे उत्तर के रूप में और कुछ चाहते हैं।

जिस तरह सरस्वती नदी की धारा कहीं दृश्य और कहीं अदृश्य है, ठीक उसी तरह का हाल आपको मुखस्थ सरस्वती (वाणी) का भी है। आपकी बातों में स्पष्टता और अस्पष्टता दोनों का मिश्रण है। आपकी सुधा-सदृश बातें सुनकर मेरे श्रवण निःसंदेह कृतार्थ हो गये, तथापि आपका और आपके वंश का नाम सुनने के लिए वे अब तक उत्सुक हैं। उनकी यह उत्सुकता पूर्ववत् बनी हुई है। प्यासे की प्यास पानी ही से जा सकती है; घड़ों दूध अथवा सेरों शहद से नहीं। अतएव तब न सही, अब उनके इस औत्सुक्य को दूर करने की उदारता दिखाइए।

नल ने कहा—मैंने जो तुम्हारे उन दोनों प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया वह इसलिए कि मैंने वैसा करना व्यर्थ समझा। उससे लाभ की कुछ भी सम्भावना नहीं; अच्छा वक्ता वही है जो मतलब की बात भी कह दे और अपने कथन को व्यर्थ बढ़ावे भी नहीं। मेरा नाम क्या है और मेरा जन्म किस वंश में हुआ है—ये ऐसी बातें हैं जिनका सम्बन्ध प्रकृति विषय से कुछ भी नहीं।

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



हम दोनों इस समय एक दूसरे के सामने हैं। अतएव, जिस काम के लिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ उसका सम्पादन, बिना मेरा नाम-धाम बतलाये भी, अच्छी तरह हो सकता है। इस विषय की बात-चीत में, पारस्परिक सम्बोधन के लिए, केवल मैं' और 'तुम' यही दो सर्वनाम काफी हैं। अच्छा, कल्पना करो कि मेरा जन्म किसी बुरे वंश में हुआ हैं। इस दशा में उसका नामोल्लेख किस तरह उचित माना जा सकेगा? और यदि मेरा वंश उज्ज्वल है, तो भी उसका नाम लेना मुझे उचित नहीं। क्योंकि ऐसे वंश में जन्म पाकर भी मेरा यहाँ दूत बन कर आना अपने वंश की बहुत बड़ी विडम्बना है। इसी से इन बातों के विषय में उदासीनता दिखाकर मैंने देवताओं का सन्देश तुम से कह सुनाया। तुम्हें भी यही उचित है कि अवान्तर बातों पर व्यर्थ विवाद न करके मेरे द्वारा लाये गये सन्देश ही का उत्तर देने के लिये तुम अपनी वाणी को प्रवृत्त करो। अच्छा, जाने दो। यदि तुम्हें इतना निर्बन्ध है तो दो शब्द कह कर मैं तुम्हारी इच्छा को पूर्ण ही क्यों न कर दूँ। सुन लो, मैं चन्द्रवंशी हूँ। अब तो तुम्हारा आग्रह सफल हो गया? नाम मैं अपना अपने ही मुँह से नहीं बतला सकता। भले आदमी अपना नाम अपने ही मुँह से नहीं लेते। क्या तुम नहीं जानती कि महात्माओं ने नियम ही ऐसा कर दिया है? लोक-निन्दा के डर से मैं इस नियम का उल्लंघन करने का साहस नहीं कर सकता।

इस पर दमयन्ती ने कहा—यह सुन कर मुझे बड़ी खुशी कि आप सुधांशुवंश के आभरण हैं। तथापि आपकी कुछ विशेष बातों के सम्बन्ध में मेरा संशय अभी तक दूर नहीं हुआ। किसी-किसी विषय में तो आपने बड़ी बेढब वाग्मिता दिखाई और किसी-किसी में बिलकुल ही मौनभाव धारण कर लिया। आपकी यह नीति मेरे समझ में नहीं आई। जो कुछ मेरी समझ में अब तक आया है वह यह है आप वञ्चना करने में बड़े चतुर हैं।



epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



प्रतारणाविद्या आपकी खूब बढ़ी हुई है। अच्छी बात है। यदि आप अपना नाम बतला कर मेरे कानों को पीयूष-रस का पान न करावेंगे तो मैं भी आपके कथित-सन्देश का उत्तर न दूँगी। पर-पुरुष के साथ बातें करने का अधिकार कुल-कामनियों को कहाँ? यह भी तो महात्माओं ही का बनाया हुआ नियम है। आप इसे जानते हैं या नहीं?

नल ने अपनी प्रियतमा दमयन्ती के इस उत्तर का हृदय से अभिनन्दन किया। मन ही मन उसने दमयन्ती के भाषण-चातुर्य्य की प्रशंसा की। दमयन्ती की कोटि-कल्पना सुन कर वह निरुत्तर हो गया। उसने मुस्कुरा कर सिर्फ यह कहा कि शहद को भी मात करने वाले, ऐसे मीठे, वचनों का प्रयोग तुम्हें, सचमुच ही, पर-पुरुष के विषय में करना उचित नहीं। पर दमयन्ती के लिये वह पर-पुरुष थोड़े ही था।

इसके अनन्तर नल बहुत गिड़गिड़ा कर इस तरह भाषण आरम्भ किया—

हाय! तुम मेरे इस इतने बड़े श्रम को विफल किये देती हो। चारों में से किसी एक दिक्पाल को अपनी कृपा का पात्र नहीं बनतीं। अमृत-तुल्य रस के स्नान से पवित्र हुई अपनी ऐसी मधुरिमा मय वाणी से तुम्हें देवताओं ही की उपासना करनी चाहिए। ऐसी रसवती वाणी से परिप्लुत उत्तर यदि तुम देवताओं के सन्देश का देतीं, तो मेरे मुँह से सुनाया जाने पर, वह देवताओं के सारे सन्ताप को एक क्षण में दूर कर देता। तुम्हारे उत्तर की अपेक्षा में मुझे यहाँ पर जितना ही अधिक विलम्ब हो रहा है, रुष्ट हुआ रति-पति उतना ही अधिक देवताओं को अपने बाणों का निशाना बना रहा होगा। मेरा एक-एक क्षण यहाँ पर एक-एक कल्प के समान बीत रहा है। मुझे धिक्कार है। दूत का काम करना भी मुझे न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



आया। यह काम बड़ी ही जल्दी का था; परन्तु, हाय ! इसमें व्यर्थ विलम्ब हो रहा है।

इतना कह के राजा नल के चुप हो जाने पर परम विदुषी दमयन्ती ने मन ही मन उन देवताओं की मूर्खता पर अफसोस किया जिन्होंने ऐसे सुन्दर पुरुष को स्त्री के पास दूत बना कर भेजा। उसने अपने मन में कहा कि जलों ( ड़ों ) के अधिपति, प्रेतों के राजा ( यम ), मरुत्वान् ( वात ग्रस्त ) इन्द्र और उर्ध्वमुख अग्नि से और क्या उम्मेद की जा सकती है ? जैसे वे स्वयं हैं वैसा ही दूत भी उनको मिला है। यह कह कर, और कुछ मुसकरा कर, नल को उत्तर देने के लिए वह प्रस्तुत हुई। वह बोली—

आपके साथ व्यर्थ परिहास करने बैठना मेरे लिए ढिठाई है। बारबार निषेध-वाक्यों का प्रयोग करते जाना वाणी की विडम्बना है। और आपकी बातका उत्तर न देना आपका अनादर करना है! इससे मुझे विवश होकर, देवताओं के सन्देश का उत्तर देना पड़ता है। सुनिए—

मैं मनुष्य-जन्म के कलंक से कलंकित हूँ। अतएव बड़ा ही आश्चय है जो देवताओं के मुँह से मेरे विषय में ऐसी बात निकली। हाँ, मैं उनकी भक्त हूँ। इसी से सम्भव है, दिगीश्वरों ने मुझ पर कृपा की हो। क्योंकि भक्त-वात्सल्य के कारण स्वामी अपने सेवकों को भी कभी-कभी ऊँची से ऊँची कृपा का पात्र समझ लेते हैं। सुरांगनाओं के सम्पर्क से सुखी महेन्द्र की यह मनोवाञ्छा कदापि उचित नहीं। सैकड़ों हंसनियों ने जिस सरोवर की शोभा को बढ़ाया है, वह यदि किसी अन्य तुच्छ जल-चारिणी चिड़िया की आकांक्षा करे तो उसकी ऐसी नीच आकांक्षा उसकी विडम्बना का कारण हुए बिना नहीं रह सकती। दिगीश्वर चाहे कुछ ही क्यों न कहें, उनकी बातें सुनने के लिए मैं बहरी बन रही हूँ। मत्त गजराज के विषय में कुरंग-कन्या क्या कभी अपना मन चलायमान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



कर सकती है ? यदि करे तो उसका यह काम बहुत ही असंगत हो।

इतना कह कर दमयन्ती ने सिर नीचा कर लिया और चुप हो गयी। उसका इशारा पाकर उसकी एक सहेली उसके पास गई। उसके कान में दमयन्ती ने कुछ कहा। तब सहेली ने नल को सम्मुखीन करके इस प्रकार उत्तर दिया—

लज्जा और संकोच के कारण मेरी सखी दमयन्ती इस विषय में और कुछ नहीं कह सकती। मेरी हृदय के भीतर घुस कर जो कुछ उसने कहा है, उसे अब आप मेरे मुँह से सुन लीजिए।

इसने अपना चित्त, बहुत दिन हुए, निषध-नरेश को दे डाला है। यह उन्हीं की हो गई है। अतएव, जिस बात की इच्छा आप इससे रखते हैं, उसे कर दिखाना तो दूर रहा, उसकी चिन्तना तक करते इसे डर लगता है। सती स्त्रियों की स्थिति बहुत ही नाजुक होती है। मृणाल-तन्तु की तरह, जरा-सा भी धक्का लगने से, वह टूट जाती है। वह यह कहती है कि स्वप्न में भी, मैंने नल को छोड़ कर और किसी के पाने की कभी इच्छा नहीं की। तुम्हारे ये चारों देवता तो सर्वज्ञ हैं। फिर ये अपनी समस्त-साक्षिणी बुद्धि से ही यह बात क्यों नहीं पूछ देखते ? उन्हें सब कुछ ज्ञात है फिर ऐसा असंगत प्रस्ताव क्यों ? ये तो सदाचार-समुद्र के कर्णधार समझे जाते हैं। अतएव, मुझे पर-स्त्री जान कर भी किस तरह ये मेरे पाने की इच्छा करते हैं ? इनके मन में तो इस प्रकार का विकार उत्पन्न ही न होना चाहिए। यह इनका केवल अनुग्रह है, जो मुझ मानुषी की प्राप्ति के ये इच्छुक हैं। परन्तु, यदि इन्हें मुझ पर अनुग्रह ही करना है, तो मुझे नल-प्रदान रूपी भिक्षा देकर ही ये मुझ पर अपना अनुग्रह प्रकट करें। ये ईश्वर हैं, इनमें सब कुछ दे डालने का सामर्थ्य है। अतएव मुझे यह भिक्षा देना इनके लिए कोई बड़ी बात नहीं। सुन लीजिए, मेरी सखी ने तो दृढ़तापूर्वक यह प्रतिज्ञा तक कर डाली है कि यदि नल ने मेरा पाणि-ग्रहण न

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



किया तो मैं आग में जल कर मर जाऊँगी, या फाँसी लगा कर प्राण छोड़ दूँगी, या जल में डूब कर जान दे दूँगी। मैं जीती रहने की नहीं। नल की अप्राप्ति में, मैं अपने शरीर को अपना शत्रु समझ कर उसके सर्वनाश द्वारा उसके शत्रु-भाव की समाप्ति किए बिना न रहूँगी। इस प्रतिज्ञा को आप अच्छी तरह याद रखिए। आत्म-हत्या करना बुरा है, यह वह जानती है। परन्तु सती-धर्म की यदि रक्षा न हो सके तो, आपत्ति काल में निषिद्ध आचरण करना भी अनुचित नहीं। राजमार्ग के कर्दम-मय हो जाने पर क्या समझदार आदमी अन्य मार्ग से नहीं आते-जाते ? मैं स्त्री हूँ। दिक्पाल पुरुष हैं और वाग्मी भी हैं। इससे मैं उनकी बातों का समुचित उत्तर देने में समर्थ नहीं। आप मुझ पर कृपा करें तो बात बन जाय। मैंने सूत्ररूप में जो कुछ आप से निवेदन किया है उस पर एक भाष्य की रचना करके तब आप उसे देवताओं को सुनाइएगा। देखिए, काट-छाँट करके कहीं उसे आप और भी छोटा न कर दीजिएगा।

इस पर नल की विकलता की बातें सुनिए——

ये त्रिलोक वन्दनीय दिक्पाल तो तुम पर इतना प्रेम प्रकट कर रहे हैं, पर तुम उनसे विमुख हो रही हो। यह पहेली मेरी समझ में नहीं आती! मुझे तो तुम्हारी बातें बड़ी कौतुकपूर्ण मालूम होती हैं। क्या यह भी कहीं सुना है कि निधि किसी निर्धन के घर में घूसने की चेष्टा करे और वह भीतर से किवाड़ बन्द करके उसे बाहर निकाल दे ? तुम्हारा व्यवहार इस समय ठीक इसी तरह का हो रहा है। यह जान कर कि तुम पर सुरेन्द्र का इतना अनुराग है, मैं तुम्हें परम सौभाग्यवती समझता हूँ, और तुम्हारा हृदय से आदर करता हूँ। परन्तु तुम ऐसे सौभाग्य-वर्द्धक व्यापार से पराङ्मुखी हो रही हो। चन्द्रमुखी! यह तो बड़े ही आश्चर्य की बात है। मर्त्यजन्म पाई हुई मानवी स्त्री

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



अमरतत्व पाये हुये देवताओं को नहीं चाहती, यह बिल्कुल ही नयी बात है, जिसे मैं आज तुम्हारे मुख से सुन रहा हूँ। यह तुम्हारा दुराग्रह मात्र है। दुख की बात है जो सब प्रकार तुम्हारा हित चाहने वाला तुम्हारा पिता भी हमारे इस दुराग्रह दोष को दूर नहीं कर देता। तुम तो स्वयं भी समझदार हो—विदुषी कहलाती हो। अतएव महेन्द्र को छोड़ कर नलप्राप्ति की अभिलाषा रखने में तुम्हें क्या लज्जा भी नहीं आती? सारे सुरों के अधीश्वर के मुकाबिले में क्यों तुम यः कश्चित नरेश्वर को अच्छा समझ रही हो? उसका इतना आदर क्यों? इसे भावी प्रबलता ही कहना चाहिए। देखो न इतना चौड़ा मुख छोड़ कर श्वासोच्छ्वास ने संकीर्ण-नासा की राह से आने जाने का श्रम उठाया है! यह भावी की बात नहीं तो और क्या है? दूसरे जन्म में जिस सुरलोक की प्राप्ति के लिए बड़े-बड़े ऋषि मुनि अपने शरीर को, तपस्यारूपी अग्नि में हुत कर देते हैं, वही सुरलोक स्वयं ही तुम्हें इसी जन्म में, अपने यहाँ ले जाने के लिए उतावला हो रहा है! परंतु तुम उसकी एक नहीं सुनतीं। तुम्हारी मूढ़ता की सीमा नहीं।

नल के न मिलने पर मर जाने का जो तुमने प्रण किया है, वह भी तुम्हारी मूर्खता ही का सूचक है। यदि तुम फाँसी लगा कर मर जाओगी तो प्राणोत्क्रमण के अनन्तर तुम्हें अवश्य ही कुछ समय तक, अन्तरिक्ष में भ्रमण करना पड़ेगी और अन्तरिक्ष में रहने वाले जीव समुदाय का स्वामी, जानती हो, कौन है? वही इन्द्र उनका स्वामी है वह तुम्हें वहाँ पाकर क्यों छोड़ने लगा। अतएव, इस दशा में तुम्हें अवश्य ही उसकी होना पड़ेगा यदि तुम आग में जल कर शरीर त्याग करोगी तो अग्नि पर मानो तुम्हारी बड़ी ही दया होगी। चिरकाल से अनेकानेक प्रार्थनाएँ करने पर भी जो तुम इस समय उसके लिए दुर्लभ हो रही हो वही तुम स्वयं ही उसे प्राप्त हो जाओगी। बिना नल के यदि तुम जल में

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



डूब मरोगी तो फिर वरुण के सौभाग्य का कहना ही क्या है। तुम्हारे बहिर्गत प्राणों को हृदय में धारण करके वह अवश्य ही कृतकृत्य हो जायगा। इन परिणामों के बचने के इरादे से सम्भव है, तुम और किसी उपाय का अवलम्बन करो। परन्तु वैसा करने से भी तुम्हारा परित्राण नहीं। क्योंकि मृत्यु के उपरान्त तुम्हें निःसन्देह ही धर्मराज का अतिथि होना पड़ेगा। अतएव तुम्हारे सदृश प्रियतम अतिथि को स्वयमेव अपने घर आया पाकर वह अवश्य ही अपना परम सौभाग्य समझेगा।

तुम्हारीं बातें सुन कर मुझे सन्देह हो रहा है कि इन्द्रादि देवताओं के विषय में जो तुमने निषेध-सूचक वाक्य कहे हैं वे कहीं स्वीकार सूचक तो नहीं। अपनी बक्रोक्तियों से कहीं तुम मेरे अभिलषित अर्थ ही की पुष्टि तो नहीं कर रहीं? तुम्हारे वचनों में वक्रता का होना सर्वथा स्वाभाविक भी है। क्योंकि विदग्ध-बालाओं के मुख से यदि व्यञ्जक वृत्ति से विभूषित वक्र वचन न निकलेंगे तो निकलेंगे किसके मुख से? चतुरा स्त्रियों का मुख ही तो ध्वनि-प्रधान उक्तियों का आकार है।

भौमि! तुम्हारे सरस्वती-रस के प्रवाह में निमग्न हुआ मैं कब तक चक्कर खाया करूँ? अपने संकोच-भाव को जरा कम करके साफ-साफ कह क्यों नहीं देतीं कि किस सुरोत्तम को तुम कृतार्थ करना चाहती हो। मेरी राय में तो सहस्र-नेत्र सुरेन्द्र को छोड़ कर और कोई तुम्हारे योग्य वर नहीं। संभव है, क्षत्रिय-गोत्र में जन्म लेने के कारण अग्निदेव पर तुम अनुरक्त हो। इस दशा में उस ओजस्वी देवता की प्राप्ति के लिए तुम्हारा मनोरथ-वती होना भी सर्वथा उचित है। मैं जानता हूँ कि तुम बड़ी ही धर्मशीला हो। अतएव तुमने धर्मराज को अपने चित्त का अतिथि बनाया हो, तो उसका भी मैं अनुमोदन करता हूँ। योग्य से योग्य का संगम होना चाहिए। शिरिष-पुष्प के समान कोमल

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



गात होने के कारण यदि तुम सारे मृदुल पदार्थों के राजा वरुण को चाहती हो तो वही क्यों न तुम्हारा पाणिग्रहण करे। निशा ने तो इसी निमित्त शीतांशु को अपना पति बनाया है। सुरपुर परित्याग करके लक्ष्मी-पति भगवान् जिस रमणीक समुद्र में दिन-रात विहार किया करते हैं, वहीं तुम भी वारीश्वर वरुण के साथ आनन्द से विहार कर सकती हो।

यद्यपि नल के इन वचनों में दमयन्ती के देव-सम्बन्धी अनुराग का मिथ्या आरोप था, अतएव वे सर्वथा विडम्बनीय थे, तथापि नल की उक्तियों को वह बड़े आदर की चीज़ समझती थी। इससे कान सहित अपने एक कपोल को हाथ पर रखे हुए दमयन्ती चुपचाप बैठी रही। खुले हुए कान से नल की उक्तियाँ मात्र उसने सुनीं। दूसरे कान को हाथ से ढक कर देव-सम्बन्धी अपने अनुराग की बात उसने अनसुनी कर दीं।

बड़ी देर तक सिर नीचा किये हुए दमयन्ती सोचती रही। तदनन्तर लम्बी उसाँस लेकर वह इस प्रकार करुण वचन बोली—

तुमने मेरे और देवताओं के सम्बन्ध में जो बातें कहीं उन्होंने मेरे लिए तेज़ नोक वाली सुइयों का काम किया—मेरे पापी कानों को उन्होंने छेद-सा डाला। अथवा यह कहना चाहिए कि उन्होंने मेरे प्राण ही निकाल लिये। कृतान्त के तो तुम दूत ही ठहरे। तुमसे और क्या आशा की जा सकती है? तुमने मेरे विषय में जो मिथ्या सम्भावनाएँ की हैं, उनके अक्षर मेरे कानों में असह्य वेदना उत्पन्न कर रहे हैं। इस कारण मैं इस समय और कुछ कहने में समर्थ नहीं।

इसके अनन्तर विदर्भनन्दिनी दमयन्ती की प्रेरणा से उसकी सहेली नल के सम्मुख हुई। वह बोली—

मेरी सखी इस समय अपनी एक जिह्वा से लज्जारूपी देवी की आराधना कर रही है। अतएव उसे मौन व्रत धारण करना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



पड़ा है। उसकी दूसरी जिह्वा आप मुझे समझें और मुझसे मेरी सखी का उत्तर सुनें। जो कुछ मैं कहती हूँ उसे आप मेरी सखी ही के मुख से निकले हुए वचन समझें।

कल ही स्वयंवर होने वाला है। उसमें निषाधनाथ नल के कण्ठ में वरमाला पहिनाने का मैंने निश्चय कर लिया है। आज का दिन मेरे इस काम में विघ्न डाल रहा है। क्योंकि मेरे प्राण कल के पहले ही निकल जाना चाहते हैं। उनके लिए एक दिन का विलम्ब भी दुःसह हो रहा है। इसलिए आज आप यहीं ठहर जाइए तो मुझ पर बड़ी दया हो। आपका दर्शन करके मैं इस एक दिन को किसीं तरह बिताने की चेष्टा करूँगी। कारण यह है कि उस हंस ने अपने नखों से मेरे प्राणाधार का जो चित्र बनाया था वह तुमसे बहुत कुछ मिलता-जुलता है। इसमें तुम्हारा भी फायदा है। तुम्हारी आँखें तुम्हारे मुख की शोभा देखने में असमर्थ हैं। ब्रह्माने उन्हें उस शोभा-विलोकन से वंचित रक्खा है। अपना मुँह अपनी ही आँखों से नहीं देख पड़ता। यदि आप आज ठहर जायँगे तो कल अपनी मुख-शोभा को नल के मुख-मंडल पर देखकर आपकी भी आँखें अपना जन्म सफल कर लेंगी। मैं हाथ जोड़ती हूँ दिगीश्वरों के लिए अब फिर याचना करके मुझे आप तङ्ग न करें। फिर वैसे शब्द आपके मुँह से न निकलें। देखिए, मेरी आँखें बेतरह अश्रु-पूर्ण हो आई हैं।

प्रियतमा दमयन्ती की ऐसी पीयूषपूर्ण वाणी सुनकर नल ने अपने आपको बहुत धिक्कारा। दमयन्ती ने तो उसे कृतान्त-दूत ही बनाया था। उनसे अपने आपको महानिष्ठुर कृतान्त ही समझा। दमयन्ती की करुणोक्तियाँ सुन कर नल का हृदय यद्यपि विदीर्ण हो गया, तथापि उसने, इतने पर भी अपने दूत-धर्म से च्युत होना उचित नहीं समझा। भीतर ही भीतर ठण्डी साँस लेकर धीरे-धीरे उसने इस प्रकार कहना आरम्भ किया—

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



सुरेश्वर इन्द्र के घर ही में कल्पवृक्ष हैं। उस पर इन्द्र ही का सर्वतोभाव से अधिकार है। यदि उससे इन्द्र यह याच्ञा करे कि तुम मेरे लिए दमयन्ती को ला दो, तो किस तरह तुम इन्द्र की जीवितेश्वरी होने से बच सकोगी? कल्पपादप से की गई याच्ञा कदापि व्यर्थ नहीं जाती। यदि तुम्हारे पाने की कामना से सर्वकामिक यज्ञ करे और अपनी ही आहवनीयादि मूर्तियों में हविश्य करना आरम्भ कर दे तो क्या होगा? इस तरह की वैदिक विधि मिथ्या नहीं हो सकती। तो तुम्हें अग्नि की प्राणेश्वरी होना ही पड़ेगा। दक्षिण दिशा में धर्म्मराज ही का अखण्ड राज्य है, उसी के राज्य में अगस्त्यमुनि रहते हैं। यदि उनसे धर्म्मराज यह कह दे कि इस दफे मैं तुमसे धनधान्यरूपी अपना षष्ठांश कर नहीं चाहता। उसके बदले तुम दमयन्ती को ला दो तो तुम्हारी दशा क्या होगी? वरुण के आश्रम में, यज्ञ के लिए सैकड़ों कामधेनु गायें बँधी रहती हैं। यदि वह उनमें से एक से भी तुमको पाने की याचना कर बैठे, तो तुम्हें उसके हस्तगत होने में कितनी देर लग सकती है? क्षण भर के लिए मान लो कि यह कुछ न हो। न सही। अच्छा यदि नल के साथ तुम्हारा पाणि-ग्रहण संस्कार होने के पहले यमराज तुम्हारे या नल के किसी कुटुम्बी का प्राणापहरण करके घर में सूतक कर दे तो! साक्षी-करण समय में अग्नि यदि प्रज्वलित होने से इन्कार कर दे तो!! कन्या-दान के समय वरुण यदि जल की धारा रोक दे तो!!! बिना इन्द्राणी के सान्निध्य के स्वयंवर निर्विघ्न नहीं समाप्त हो सकता। अतएव यदि पति की आज्ञा से शची तुम्हारे स्वयंवर में न आवे और उपस्थित राजों में विघ्न-रूप युद्ध छिड़ जाय तो!!! दमयन्ती! सोच-समझ कर काम करो, हठ और दुराग्रह अच्छा नहीं। मूर्खता छोड़ो। मैंने जो कुछ कहा उसी में तुम्हारा परम हित है। विघ्न करने के लिए देवताओं के उतारू

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



होने पर किसकी सामर्थ्य है जो इस हथेली पर रक्खी हुई चीज़ पर भी अपना अधिकार जमा सके ?

नल की इन बातों को दमयन्ती ने अक्षर-अक्षर सच समझा। उसे विश्वास हो गया कि अब नल की प्राप्ति असम्भव है। निराशा ने उसे अभिभूत कर दिया। उसके नेत्र पर सावन-भादों की जैसी घन-घटा छा गई। उसका सारा धैर्य जाता रहा। वह महाविकल और विह्वल हो उठी। आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई वह बिलख-बिलख कर रोने लगी। उसे मतिभ्रम-सा हो गया। कुछ होश में आने पर उसने विलाप आरम्भ किया—

दूसरों के अभिलषित फल के खा जाने का व्रत धारण करने वाले रे पापी दैव ! तू अब कृतार्थ हो। मेरे निष्फल प्राणों के पात के साथ ही तू भी पतित हो जा। स्त्री हत्या का पाप अब सिर पर ले। वियोग-वह्नि से अत्यन्त तप्त हुए हृदय ! तू किस चीज का बना है ? इस्पात का तो तू है नहीं ? यदि होता तो इतना ताप सहने पर अवश्य ही गल जाता। वज्र भी तू नहीं; क्योंकि पञ्च शर के शरों से तू बेतरह छिदा हुआ है। और वज्रमें छेद हो नहीं सकते। अतएव, कहता क्यों नहीं, कि क्यों तू फट कर दो टुकड़े नहीं हो जाता ? हे जीवित ! शीघ्र ही तुम यहाँ से पलायन करो। मेरा हृदय ही तुम्हारा घर है और वहाँ आग लग गई है—वह जल रहा है। सुख की व्यर्थ आशा को तुम अब तक नहीं छोड़ते ! धिक्कार है, तुम्हारी इस मूर्खता और तुम्हारे अपूर्व आलस्य को !!!

रे मन ! जिस प्रिय वस्तु को तू चाहता था, उसके मिलने की जब आशा न रही तब तू मौत मांगने लगा। पर वह भी तुझे नहीं मिलती—न वह वस्तु ही मिलती है, न मौत ही मिलती है। जो कुछ तू चाहता है वही तेरे लिए अप्राप्य हो जाता है—इससे तू वियोग ही क्यों नहीं माँगता ? मुझे यह इच्छा करनी चाहिए कि प्रियतम से मेरा वियोग हो जाय। परन्तु हाय ! अब वह भी

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



सम्भव नहीं। इस समय एक-एक क्षण मेरे लिए एक-एक युग हो रहा है। कब तक मुझे ये यातनायें सहनी पड़ेंगीं ? माँगने से मृत्यु भी नहीं मिलती। इधर मेरा अभिलषित कान्त मेरे हृदय को नहीं छोड़ता, उधर उसे मेरा मन नहीं छोड़ता, और मन को भी मेरे प्राण नहीं छोड़ते। हाय-हाय; कैसी दुःख परम्परा है।

हे देववर्ग, जिसके एक ही कण में मेरे उग्र से उग्र सन्ताप का संहार हो सकता है वह तुम्हारा दयासागर किसने पी लिया ? क्या वह इस समय बिलकुल ही सूख गया है ? यदि तुम मन में जरा भी इच्छा करो तो अपने एक ही संकल्प-कण से तुम मुझसे भी उत्तम और कोई नारी-रत्न अपने लिए प्राप्त कर सकते हो। मैं सर्वथा तुम्हारी अनुकम्पनीय हूँ। अतएव मुझ पर तुम्हें इतना जुल्म न करना चाहिए। हे नैषध! मैं जी-जान से तुम पर अनुरक्त हूँ। तुम्हारे कारण, इस समय मुझ पर जो बीत रही है--जो यन्त्रणा मैं भोग रही हूँ--उसकी खबर किस तरह मैं तुम तक पहुँचाऊँ। ब्रह्मा ने उस पक्षी को भी, न मालूम, कहाँ छिपा दिया। एक-एक सरोवर उसके लिए ढूँढ़ डाला गया। पर; कहीं पता न चला। यदि वह मिल जाता, तो मेरी इस दुर्गति का समाचार तों तुम्हें ज्ञात हो जाता। मेरा मन एकमात्र तुम्हारे ही चरण-कमलो में लीन है। क्या इस बात को तुम नहीं जानते ? और यदि जानते हो तो तुम्हें मुझ पर दया क्या नहीं आती ? दयाधनों को इतन निठुराई शोभा नहीं देती। अथवा इसमें तुम्हारा कुछ भी अपराध नहीं। दैव जो चाहे करे। वह ज्ञानियों को भी विचारान्ध कर देता है। खैर। मेरी मृत्यु अब अनिवार्य है। मेरा प्राणान्त हो जाने पर कभी न कभी तो तुम्हारे कान में यह भनक अवश्य ही पड़ेगी कि दमयन्ती ने मेरे लिए प्राण दे दिये। अच्छा, नाथ। इस समय मुझ पर दया नहीं आई तो न सही। मेरा मृत्यु समाचार पाने पर ही मुझ पर कुछ दया दिखाने का अनुग्रह करना। मैंने सुना है कि

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



तुम बड़े दानी हो—तुम याचकों के कल्पद्रुम हो। इसमें मैं भी तुमसे एक छोटी-सी याभना करती हूँ। हे प्राणाधिक! मेरा हृदय अब विदीर्ण होने ही पर है। उसके दो टुकड़े हो जाने पर, जिस रास्ते मेरे प्राण निकलेंगे उसी रास्ते, उन्हीं के साथ, कहीं तुम भी न निकल खड़े हो जाना!

पत्थर को भी पिघलाने वाला दमयन्ती का ऐसा विलाप सुन कर नल को आत्म-विस्मृति हो गई। उन्माद-ग्रस्त मनुष्य को जो दशा होती है वही दशा उसकी भी हो गई। इस दशा को प्राप्त होने पर वह अपने दूत-भाव को बिलकुल ही भूल गया। अज्ञानावस्था में वह इस तरह की प्रलाप-पूर्ण बातें कहने लगा—

प्रिये! तू किसके लिए इतना विलाप कर रही है? अपने मुख को अश्रुधारा से क्यों वृथा धो रही है? यह नल तो तेरे सामने ही तुझे प्रणाम करता हुआ खड़ा है। तिर्यक नेत्रों क विलास से क्या तूने उसे नहीं देखा? लीला कमल को हाथ में लेने के बदले अपने मुख को क्यों तूने उस पर रख छोड़ा है। मुख को लीला-कमल बनाने का कारण क्या? तेरे नेत्रों से बहने वाले अमङ्गल अश्रुओं को ला, मैं अपने हाथ से पोछ दूँ। ला, मैं अपने मस्तक से तेरे पद पङ्कजों की रेणुका का क्षालन करके उसके साथ ही अपने अपराधों का क्षालन करा लूँ। प्रिये! यदि तू मेरा आदर-सत्कार करके मुझ पर अनुग्रह नहीं करना चाहती तो न कर। पर मैं तेरे सामने सिर झुकाए खड़ा हूँ। इससे मेरा प्रणाम तो तुझे स्वीकार ही कर लेना चाहिए। यह तो कोई बड़े परिश्रम का काम नहीं। याचकों के लिए तो तू कल्पवृक्ष ही रही है, पर मेरी तरफ एक बार अच्छी तरह देखती भी नहीं, मुझे दृष्टिदान तक नहीं देती! मुझसे इतनी कंजूसी क्यों? आँखों से आँसुओं की झड़ी बन्द कर; मन्द मुसकान रूपी कौमुदी को फैलने दे; मुख-कमल को विकसित होने दे; नेत्र खञ्जरीटों को

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



यथेच्छ विहार करने दे। बोल-चोल। अपपनी मधुमयी वाणी सुनाकर मेरे मुरझाए हुए हृदय-पुष्प को फिर प्रफुल्लित कर दे। चंद्रमा को निशा-नारी के समान तू ही नल की एक मात्र प्राणाधार है।

इतना कह चुकने पर नल का उन्माद अकस्मात् जाता रहा। उसे होश आ गया। यह जान र कि जो बातें मुझे न कहनी थीं वे भी मैंने कह डाली, उसे घोर परिताप हुआ। वह बोला——

हाय! मुझे क्या हो गया। क्यों मैंने इस तरह अपने को प्रकट कर दिया? इन्द्र मुझे अब क्या कहेगा? उसके सामने तो अब मैं मुँह दिखलाने लायक भी न रहा! अपना नाम अपने मुँह से बतला कर मैंने दिगीश्वरों का काम मिट्टी में मिला दिया। हनुमान आदि के उपार्जित यश से जो दूत-पथ इतना प्रशस्त हो रहा था उसमें मैंने काँटे बिखेर दिये। ईश्वर तू मेरा साक्षी है, जान-बूझ कर मैंने ऐसा नहीं किया। हाय, मेरी छाती लज्जा से फट क्यों नहीं जाती? यदि फट जाती तो देवताओं को मेरी हृदय-शुद्धि का ज्ञान तो हो जाता। खैर, देवता तो सर्वज्ञ हैं। सच क्या है वह जान लेंगे। पर सांसारिक जनों के मुँह पर कौन हाथ रखता फिरेगा? लोकनिन्दा से मेरी किसी तरह रक्षा नहीं।

बड़ी देर तक नल को इस तरह विलाप करते और सिर धुनते देख उस दिव्य हंस को उस पर दया आई। वह अचानक वहाँ आकर उपस्थित हो गया। उसने नल को समझा-बुझा कर शान्त कर दिया। उसने कहा——

बस, बहुत हो चुका। और अधिक दमयन्ती को पीड़ित न कीजिए। निर्दयता छोड़िए इसको स्वीकार कीजिए। अधिक निराश करने से यह अवश्य ही अपनी जान दे देगी। आपने अपने आपको जान-बूझ कर प्रकाशित नहीं किया। इसमें आपका कोई अपराध नहीं। देवता आप पर कदापि अप्रसन्न न होंगे। वे आपके हृदय की शुद्धता को अच्छी तरह जानते हैं। यह कह कर वह हंस

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmand

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



जब वहाँ उड़ गया तब उन चारों दिक्पाल-देवताओं को प्रणाम करके नल दमयन्ती से इस प्रकार मधुर वाणी बोला—

देवताओं में अनुराग उत्पन्न करने की व्यर्थ चेष्टा करके मैंने तुम्हारी बहुत कदर्थना की। परन्तु इसमें मेरा कुछ दोष नहीं। मैं सर्वथा निरपराध हूँ। मैंने निष्कपट भाव से देवताओं की दूतता की है यही मेरा धर्म था। धर्म-पथ से डिगना मैं मृत्यु से भी भयंकर समझता हूँ। अब वे चाहे मुझ पर इस कार्य के उपलक्ष में दया दिखावें, चाहे मुझे अपराधी समझ कर दण्ड दें। मुझे कुछ नहीं कहना। देवता तो तुम पर हृदय से अनुरक्त हैं, पर तुम मुझ को अपना दास बनाने का आग्रह कर रही हो। यह बड़े ही असमञ्जस की बात है। खैर जो कुछ करना, बहुत सोच समझ कर करना। ऐसा न हो कि तुम्हें पीछे पश्चात्ताप करना पड़े। मेरी इस सलाह को तुम पक्षपात-दूषित मत समझो। यह सलाह मैं देवताओं के डर से नहीं दे रहा और न इसलिए दे रहा कि तुम में मेरा अनुराग ही कम है। नहीं, बात ऐसी नहीं। मैं पक्षपात रहित होकर तुम्हारे हित की आकांक्षा से ही ऐसी सलाह देने को बाध्य हुआ हूँ। मैं अपनी दशा का तुम से क्या वर्णन करूँ! तुम्हारे हित के लिए—तुम से उऋण होने के लिए यदि मुझे अपने प्राण भी दे देने पड़ें तो भी मैं सुख पूर्वक उनका समर्पण करने को तैयार हूँ। तुमने मुझ पर जो कृपा की है उसके बदले में यदि मेरे प्राण भी तुम्हारे किसी काम आ सकें, तो उनके दान से भी मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

नल की इस पीयूष वर्षिणी वाणी को सुन कर दमयन्ती को परमानन्द हुआ। नल को पर-पुरुष समझ कर, उसके सामने बातें करने के कारण, उसके हृदय में जो घृणा और आत्म-निन्द-भाव उदित हुआ था, वह सब जाता रहा। परन्तु नल के सामने तद्विषयक अपने अनुराग आदि को प्रकट करने के कारण उसे बेतरह सङ्कोच हुआ। वह लज्जा से अभिभूत हो उठी। उसके

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:



मुँह से फिर एक भी शब्द न निकला ! उसकी यह दशा देखकर उसकी सहेली अपना कान उसके मुँह के पास ले गई। परन्तु तब उसकी सहेली ने मुसकरा कर नल से कहा—सरकार प्रियतमा पर लज्जा ने यहाँ तक अपना अधिकार जमा लिया है कि अब वह आपके सम्मुख अपने मुख से एक अक्षर तक भी निकालने में समर्थ नहीं। उसके मौन-धारण का और कोई कारण नहीं, कारण केवल लज्जा है। अतएव आप उस पर अप्रसन्न न हूजियेगा। कहीं आप उस पर यह इलजाम लगाने की चेष्टा न कीजियेगा कि यह तो बोलती नहीं—इसने जो कुछ पहले कह था सब बनावटी था। नहीं ऐसा नही है। यह कह कर उसने दमयन्ती की नल-सम्बन्धिनी वे सब बातें कह सुनाई, जो उसने नल-प्राप्ति की कामना से, समय-समय पर कहीं थीं। उनसे सिद्ध किया कि नल पर दमयन्ती का स्नेह कितना प्रगाढ़ है।

हर प्रकार भीमात्मजा दमयन्ती की सारी रहस्यपूर्ण बातें सुन कर, अपने सौभाग्य की प्रशंसा करते हुए, नल ने वहाँ से प्रस्थान किया। दमयन्ती के महल से चल कर नल शीघ्र ही पूर्वोक्त दिक्पालों के सामने उपस्थित हुआ और उसने अपने दूतत्व की सारी बातें यथातथ्य कह सुनाई। सुन कर देवताओं के चेहरे का रङ्ग फीका पड़ गया।

प्रातःकाल वे सब दमयन्ती के स्वयंवर में पहुँचे। अपने कौटिल्य का जाल बिछाने में उन्होंने वहाँ भी कसर न की। उन्होंने विषम विघ्न उपस्थित कर दिया। नल का रूप धारण करके वे वहाँ जा बैठे! परन्तु अपने सतीव्रत के बल से उन विघ्न-बाधाओं को पार करके दमयन्ती ने अन्त में नल के कण्ठ में वरण-माल्य पहना ही दिया। अपनी भक्ति से उसने उन देवताओं को यहाँ तक प्रसन्न कर लिया कि नल को उसकी वकालत का मिहनताना भी, वर-प्रदान के रूप में देना पड़ा।

❀ समाप्त ❀

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:
epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathma

In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding:

# हमारे प्रकाशन की सूची

१—कविवर रत्नाकर लें० कृष्णशंकर शुक्ल एम० ए०
२—प्रसाद और उनका साहित्य ले० विनोदशंकर व्यास
३—उपन्यास कला " "
४—सीकर ले० श्री मती तारा पांडे
५—उत्सर्ग " " १॥)
६—आभा " " १)
७—रेखाएँ " " १)
८—दीपदान ले० पं० बलदेवप्रसाद मिश्र १)
९—बन्दी ले० कपिलदेव नारायण सिंह १)
१०—महारथी अर्जुन ले० राम बहोरी शुक्ल १।)
११—महावीर कर्ण ले० पं० रामनारामण चतुर्वेदी १)
१२—डाक्टर सनयात सेन ले० विश्वनाथराय एम० ए० १।)
१३—कच्चा धागा ले० पं० द्विजेन्द्र नाथ मिश्र २)
१४—छाया " " १।)
१५—टीला " " १॥)
१६—काव्य कौस्तुभ ले० विद्याभूषण मिश्र एम० ए० १॥)
१७—दोनों की भूल (व्यथित हृदय)
१८—आँखों देखा महायुद्ध ले० रामचन्द्र वर्मा
१९—नारी भूषण ले० श्री वृन्दावन जी हेड मास्टर
२०—डाक्टर बनाम पहलवान लड़की (प्रसहन)
२१—फ्रांस की दो आँखें ले० रामकृष्ण शर्मा
२२—यान्त्रिक आविष्कार ले० महेन्द्र चन्द्र राय एम०
२३—मनोवेदना उपन्यास
ले० अम्बिका प्रसाद वर्मा 'दिव्य' एम०
२४—रसज्ञ रञ्जन ले० पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी
२५—हिन्दी गद्य प्रकाशिका ले० देवेन्द्र चन्द्र विद्याभ

epal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathman